ओ३म्

# जन-ज्ञान (मासिक)

अप्रैल 1998

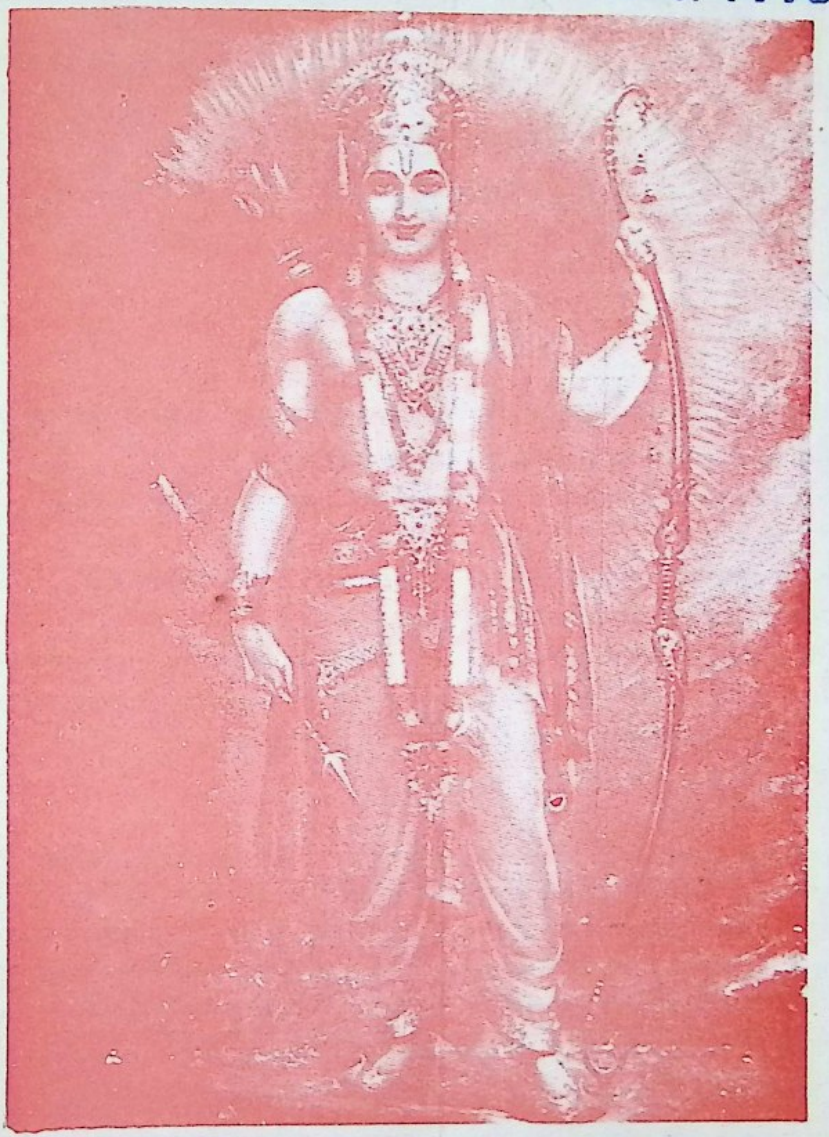

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

ओं सच्चिदानन्देश्वराय नमो नमः

## जनज्ञान प्रसार का अभियान हिन्दुत्वनिष्ठों से आह्वान

# राष्ट्र

**क्या था?**
**क्या हो गया?**
**क्या होना चाहिए?**
**जानने के लिए**
**पढ़ें एवं पढ़ाएं**

# जनज्ञान (मासिक)

- घर-घर में पहुंचाएं। दयानन्द संस्थान के धर्म प्रचार अभियान में हाथ बटाएं।
- 'जनज्ञान मासिक' मात्र पत्रिका ही नहीं अपितु आन्दोलन है।
- राष्ट्रद्रोही तत्त्वों के षड्यंत्रों का भण्डाफोड़ और राष्ट्रभक्तों को सुस्पष्ट समर्थन ही हमारी अडिग नीति है।
- देव दयानन्द की सनातन विचारधारा का प्रचार-प्रसार हमारा संकल्प है।
- 'सत्य के अर्थ' का प्रकाश हमारा व्रत है।
- वैदिक संस्कृति और हिन्दुत्व की मानव कल्याणकारी विचारधारा के हम प्रसारक हैं।
- राष्ट्र की एकता और अखण्डता तथा सुरक्षा के लिए जन-जागरण ही हमारा कार्यक्रम है।
- 'जनज्ञान' व्यवसायिक नहीं, एक वैचारिक मासिक पत्रिका है।

वार्षिक शुल्क ७० रुपये है। आजीवन ५०१ रु० है।

आजीवन सदस्य बनने पर २०१ रु० का बढ़िया वैदिक साहित्य उपहार स्वरूप प्राप्त करें।

सत्य सनातन धर्म और वेद का संदेश जनज्ञान का अभियान है। स्वयं सदस्य बनें औरों को बनाएं। हमारा आप से आह्वान है कि राष्ट्र निर्माण के इस अनुष्ठान को गतिमान रखने के लिये अपने सहयोग का हाथ बढ़ायें। जनज्ञान को घर-घर में पहुंचाकर वैदिक संस्कृति और भगवान राम, कृष्ण, दयानन्द के मानवतावादी चिन्तन को फैलाएं। आपका सहयोग ही हमारी शक्ति है।

*सम्पर्क कार्यालय :* २२८६, आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-५ दूरभाष : ५७२४७४१, ५८१५४५७
*प्रधान कार्यालय :* वेद मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम योग केन्द्र, पो०-मुखमेलपुर, दिल्ली-३६ दूरभाष : ७२०२२४९

कृण्वन्तो-विश्वमार्य्यम्

ओ३म्

# जनजाग्रति

वेदो

नई दिल्ली

हिन्दू राष्ट्र स्थापना हेतु संघर्ष करो

**कार्यालय**

2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5724741, 5815457

**प्रधान कार्यालय**

वेद मन्दिर, महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम
लेखरामनगर (इब्राहीमपुर) पो. मुखमेलपुर
दिल्ली-36, दूरभाष : 7202249

**संस्थापक : स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः**

संरक्षक : **रमेशचन्द्र चोपड़ा**
सम्पादक : **पंडिता राकेश रानी**
सह-सम्पादक : **दिव्या आर्य**

वार्षिक मूल्य-70 रु० आजीवन-501 रु०
एक प्रति - 7 रुपये
विदेश में विमान से, 50 पौंड, 65 डालर
समुद्री डाक से 7 पौंड, 12 डालर
विदेश में आजीवन 5001 रुपये
अप्रैल 1998 वर्ष 32 अंक 12

*सम्पादकीय*

## इतिहास के संकेत : काल की ध्वनि

**प्राचीन** वैदिक साहित्य में उल्लिखित कालगणना क्रम के अनुसार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा सृष्टि सम्वत् का युग नववर्ष का प्रथम दिवस है। स्वदेश के इतिहास के पृष्ठों में अंकित है यह तथ्य भी कि चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ही सार्वभौम सम्राट के रूप में पदासीन हुए थे परम प्रतापी शकारि विक्रमादित्य। जिन्होंने अपने प्रबल पराक्रम से आक्रान्ता शकों की आक्रामक शक्ति को क्षार-क्षार कर आर्य शौर्य, वैदिक वीरत्व और मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम द्वारा स्थापित मर्यादाओं का पुनरुद्धार किया था। उसी दिन से विक्रम सम्वत् का भी शुभारम्भ हुआ था। अपनी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के कारण विक्रम सम्वत्सर राष्ट्रीय सम्वत् के रूप में भी प्रतिष्ठित हो गया है।

अतीत इतिहास हो जाता है तो वर्तमान घटनाक्रम राजनीति की संज्ञा पाता है। इतिहास प्रदत्त सीख अर्थात् अनुभवों से शिक्षा ग्रहण करके राजनीति को दिशा प्रदान करने वाले ही वर्तमान को संवार कर समुज्ज्वल भविष्य का सृजन कर पाने में समर्थ हो पाते हैं। इतिहास से सीख न ले, वर्तमान की नृत्य नाटिका में मात्र अभिनेता की भूमिका निभाने वाले सामान्य जन को मोहित कर सकने योग्य अभिनय से, अपनी प्रशंसा में तुमुल करतल ध्वनि का प्रसाद तो पा जाते हैं, साधुवाद भी उन्हें प्राप्त हो सकता है, किन्तु वे स्वर्णिम अतीत से प्रेरणा प्राप्त कर राष्ट्र समुज्ज्वल भविष्य का निर्माण करने में सफल नहीं हो पाते।

स्वदेश के इतिहास में निश्चय ही इस बार की वर्ष प्रतिपदा ने एक प्रेरक पृष्ठ जोड़ा है। २८ मार्च, १९९८ को लगभग दो दिन तक विश्वास मत पर देश की लोकसभा में चली लम्बी बहस के बाद श्री अटल बिहारी वाजपेयी की सरकार, बहुमत का अपने प्रति समर्थन सदन में सिद्ध कर सत्ता में विधिवत प्रतिष्ठित हुई है। एक अद्भुत संयोग है कि जिस वैचारिक संस्कार प्रदान करने वाले 'गुरुकुल' में श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने राष्ट्र के प्रति अनन्य निष्ठा मंत्र श्रवण कर, उसे अपने चिन्तन-मनन का आधार बनाया, उसकी स्थापना भी ७३ वर्ष पूर्व महान मनीषी डॉ० केशव राव बलराम हेडगेवार ने प्रतिपदा के प्रेरक दिवस पर नागपुर में की थी। वीर सावरकर ने हिन्दुत्व का जो अमृतघट अपने गहन गम्भीर अध्ययन, इतिहास के मन्थन के उपरान्त इस राष्ट्र की जीवनशक्ति के अजस्र स्रोत के रूप में प्रतिष्ठित किया, डॉ० हेडगेवार ने। उसी के अमृतकण आसिन्धु सिन्धु पर्यन्त विस्तीर्ण इस आर्यावर्त्त, भारतवर्ष, हिन्दुस्थान के जनगण में विरित करने को अपनी साधना का लक्ष्य बनाया था। उस महान कर्मयोगी ने घोषित किया था हिन्दू राष्ट्र को परम वैभव के शिखर पर प्रतिष्ठित करना। उसी

मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक : पंडिता राकेश रानी 2286 आर्य समाज मार्ग, करोल बाग, नई दिल्ली-110005 द्वारा डीलक्स आफसेट प्रिन्टर्स 305/4 शहजादा बाग दिल्ली से मुद्रित एवं प्रकाशित।

संघ के एक स्वयंसेवक श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने इस बार प्रतिपदा के पावन दिवस पर स्वदेश का सत्ता सूत्र ग्रहण किया है। इतिहास ने निश्चय ही एक करवट ली है। क्योंकि भारत माता की विदेशी दासता की श्रृंखला से बन्धनमुक्ति के बाद श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने देश का प्रथम गैर कांग्रेसी प्रधानमंत्री होने का गौरव पाया है। स्वदेश में गैर कांग्रेसी सरकारों की संज्ञा तो श्री मोरारजी देसाई, चौधरी चरण सिंह, विश्वनाथ प्रताप सिंह, श्री चन्द्रशेखर एवं श्री हरदनहल्ली देवेगौड़ा व श्री इन्द्र कुमार गुजराल के नेतृत्व में गठित सरकारों को भी मिली, किन्तु यह तथ्य इतिहास में अंकित है कि ये सभी नेता किसी न किसी समय भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में सक्रिय रह चुके थे। इन सबसे पृथक् हैं श्री वाजपेयी की चिन्तन पृष्ठभूमि। उन्होंने राष्ट्रवाद का महामन्त्र राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की शाखा और आर्य कुमार सभा में सक्रिय रहकर पढ़ा है तो महर्षि दयानन्द की विश्व को महान देन सत्यार्थ प्रकाश का भी अपनी किशोरावस्था में रामायण के तुल्य अध्ययन कर सत्य के अर्थ को हृदयंगम करने का अभ्यास किया है।

श्री वाजपेयी ने अपने पुराने नए सहयोगियों सहित देश की सत्ता का सूत्र ऐसे अवसर पर ग्रहण किया है, जब अनेक चिन्तकों के विचार में भारतीयता की वास्तविक पहचान के विलुप्त होते जाने जैसा सिलसिला चल रहा है। सदियों से इस राष्ट्र को एकता और अखण्डता को एकता कसे सूत्र में आबद्ध रखने में इतिहास की कसौटी पर खरी उतरी वैदिक परम्परा ने इसे एक विशिष्ट पहचान दी। जबकि प्रवाह पतित सा हुआ अपना सारा समाज आधुनिकता के वर्तमान में काष्ट के टुकड़े के तुल्य प्रवाहित होता प्रतीत हो रहा है। हम स्वयं अपनी दिशा में अनभिज्ञ से होते जा रहे हैं। परम्परा का गुणगान करते हम नहीं अघाते किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि हम उसके वास्तविक सार से अनभिज्ञ हैं। ऐसा लगता है कि उस परम्परा के प्रति हममें सच्ची आस्था का भी अभाव है। स्वभाषा, स्ववेश भूषा विरक्ति का भाव आज समाज की प्रवृत्ति बनता जा रहा है यह स्थिति ऐसे समय में हममें उभर रही है, जब जिस पाश्चात्य जगत् की सुख-समृद्धि की ओर हम नेत्र मूंद कर दौड़ने में एक-दूसरे से होड़ लगाने को आतुर हैं, उसी भौतिक समृद्धि से भरे संसार से वहां की युवा पीढ़ी मुक्ति पाने को आतुर है। वास्तविक शांति और आह्लाद की प्राप्ति हेतु वह वेदों के ज्ञान से आप्लावित रही भारतभूमि, हिन्दुस्थान की पावन वसुन्धरा की ओर निहार रही है। संकीर्णता, उन्माद और पूर्वाग्रहों तथा दुराग्रहों से मानव मन को छुटकारा दिलाने में समर्थ वह वैदिक संस्कृति, उसे अपनी ओर आकृष्ट कर रही है जिसकी अभिव्यक्ति ऋग्वेद के इस मन्त्र में हुई है, जिसमें उद्घोषित हुआ है यह सूत्र **आनो भद्राः कृतवो यन्तु विश्वतः** अर्थात् पूरे विश्व से अच्छे विचार, अच्छा ज्ञान अपने पास आने दो। एक सत् विप्रा बहुधा वदन्ति की उद्घोषक भारत की माटी आज पाश्चात्य जगत् की युवा पीढ़ी के लिए आकर्षण की स्थली बन गयी है।

ऐसे संक्रमण काल में भारतीय राजनीति में नव जागरण का जो पृष्ठ जुड़ा है, वह है हिन्दुत्व विरोधी राजनीति के पराभव और हिन्दुत्व निष्ठ राजनीति की विजय के पर्व के संकेत का। हिन्दुत्व इस राष्ट्र का मूल स्वभाव है। किन्तु गत एक सहस्र वर्षों से इसी हिन्दुत्व के दमन की कुनीति और राजनीति चलती आ रही है। कभी विदेशों से आए आक्रान्ताओं से मजहब के नाम पर चुनौती मिली तो कभी विदेशों से इस धरती पर आए व्यापारियों ने राष्ट्र जन को छल-छद्म, साम, दाम, दंड और भेद के चतुर्दिक प्रहारों से हिन्दुत्व से विमुख करने के घिनौने प्रयास किए। साथ ही यह भी अकाट्य तथ्य है कि हिन्दू जन, हिन्दू मन इन आक्रान्ता शक्तियों से सतत संघर्षरत रहा। १८५७ के स्वातन्त्र्य समर से 'व्यापारी' बनकर बटमारी करने वाली सत्ता से इस राष्ट्र ने टक्कर लेने का जो क्रम चलाया, उसे ही वासुदेव बलवन्त फड़के, चाफेकर बन्धुओं और वीर विनायक दामोदर सावरकर, देवता स्वरूप भाई परमानन्द, लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय जैसे क्रान्ति दूतों ने आगे बढ़ाया। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम और योगेश्वर श्री कृष्ण का जीवन दर्शन उनके प्रेरणा का स्रोत बने तो दयानन्द के वैचारिक दर्शन की थाती से भी वे निहाल हुए। साथ ही यह भी ऐतिहासिक सत्य है कि कतिपय मोहक नारों ने हिन्दू समाज को दिग्भ्रमित भी किया। उन नारों के उद्गाताओं ने 'सेक्युलरिज्म' के नाम पर हिन्दू को स्वाभिमान शून्य बनाने का एक सुनियोजित अभियान चलाया। जिसके तहत भारत माता के बेटों को बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक खेमों में खड़ा कर समाज को विभाजित करने को ही राष्ट्रीय एक्य का पथ बताया गया।

किन्तु अब देश के इतिहास ने निश्चय ही एक करवट ली है। अब समूचा हिन्दू समाज किसी अन्य पक्ष से अन्याय की घृणित सोच के आधार पर नहीं बल्कि भारत की पावन मिट्टी से निनादित **सर्वे भवन्तु सुखिनः** के सन्देश को साकार करने के लिए प्रखर राष्ट्रवाद की पावन धारा में अवगाहन कर विश्व की विभ्रान्ति मानवता को पथ दर्शाने में स्वयं को समर्थ बनाने हेतु सन्नद्ध होने लगा है। अब समूचा हिन्दू समाज अपनी संभ्रान्ति से बाहर निकल कर अन्तिम विजय के लिए एकजुट होता प्रतीत हो रहा है। आज हिन्दू ने अपनी ही नाभि में स्थित हिन्दुत्व की कस्तुरी को खोज निकाला है। अब राष्ट्रजन को धीरे-धीरे इस सत्य का साक्षात्कार होने लगा है कि हिन्दू जातिवाचक नहीं अपितु राष्ट्रवाचक संज्ञा है और हिन्दुत्व का अर्थ है मनसा, वाचा, कर्मणा हिन्दुस्थान के प्रति अनन्य निष्ठा की भावना।

इसी हिन्दुत्व, इसी भारतीयता से ओत-प्रोत है भारत के प्रथम गैर कांग्रेसी प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी

## इस अंक में पढ़ें

(आवश्यक नहीं कि सम्पादक लेखकों की रचनाओं में अभिव्यक्त सभी विचारों से पूर्णतः सहमत हो।)


कर्म और चिन्तन का बोध ही काल का मर्म
—सम्पादकीय १
महात्मा वेदभिक्षु: की अमर वाणी ४
आर्य समाज क्या चाहता है? ५
सामयिक विचार ७
आपके पत्र १०
ज्ञान-विज्ञान का अनुपम स्रोत वेद
—डॉ० कपिलदेव द्विवेदी १२
विश्व पुरुष राम और भारत की एकता
—डॉ० रामप्रसाद मिश्र १७
मां का खोया हुआ बेटा : विक्रम सम्वत् का प्रणेता १९
जलियांवाला बाग : भगतसिंह और शहादत
—राकेश रानी २१
वेद प्रचार संकल्प एवं राष्ट्ररक्षा सम्मेलन २३
अमर शहीदों का बलिदान
—राम बिहारी विश्वकर्मा २७
डॉ० बालकृष्ण शिवराम मुंजे ३०
भाल जी पेंढारकर
—अरविन्द जैन ३२
पं० इन्द्रराज जी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व
—स्वराज्य चन्द्र ३३
भारत की अखण्डता पर मंडराते खतरे (१)
—ज्योतीन्द्र नाथ दीक्षित ३५
नास्तिकता और आस्तिकता
—अजेय ब्रह्मचार ३७
पश्चिमी देश और प्राच्य विधाएं—२
—डॉ० भवानीलाल भारतीय ४०
वर्तमान परिवेश और साहित्यकार का दायित्व
—डॉ० त्रिलोकीनाथ 'प्रेमी' ४२
महिला दिवस एक औपचारिकता
—प्रतिभा ४६
समाचार दर्शन ४८


का दृष्टिकोण। उनका इस पद पर आसीन होना सनातन भारतीयता की विजय का परिचायक है। यदि श्री अटल जी और उनकी पार्टी उस सनातन भारतीयता के प्रति, जिसका मूल स्रोत वेद का ज्ञान और दर्शन है, के प्रति अपनी अडिग आस्था की अभिव्यक्ति नहीं करती तो सत्ता में कदापि नहीं आ पाती। श्री वाजपेयी के अपने शब्दों में—

**बोल रही अधर्म की तूती दुस्तर हुआ धर्म का पालन**
**तब स्वदेश रक्षार्थ दिश का सोया क्षत्रियत्व जागा था।**
**राम रूप में प्रगट हुई ज्वाला जिसने असुर जलाए**
**देश बचाया, वाल्मीकि ने जिसको गाया।**

जहां यह सत्य है कि श्री वाजपेयी भारतीयता की सनातन यात्रा के पथ के पथिक हैं, वहीं यह तथ्य भी उभर कर सामने आया है कि व्यवहार के नाम पर उन्हें अवांछनीय समझौते भी करने पड़ रहे हैं। संक्रमण के इस काल का यह भी एक प्रतिफल है कि उनके जैसा प्रखर राष्ट्रवादी भी कई बार समझौते करने पर विवश प्रतीत होता है। हम सर्वशक्तिमान से प्रार्थना करते हैं कि वह उन्हें बल प्रदान करे समस्याओं के मकड़जाल से मुक्त होकर पग बढ़ाने का।

हमें विश्वास है कि युग की इस विभीषिका का गरल पान करके भी वह अपनी आन और वैचारिक अनुष्ठान में अटल रहेंगे और उनका जो व्यापक दृष्टिकोण है, स्वरूप है वह यथावत रहेगा। इस विषम परिस्थिति में भी वे नए मार्ग खोज ही लेंगे। क्योंकि वह प्रतिज्ञाबद्ध सैनिक हैं, उस वाहिनी के जो पुरातन के अधिष्ठान पर अनुनातन राष्ट्र खड़ा करने के लिए संकल्पबद्ध है। जिसका सपना है इस राष्ट्र को परम वैभव के शिखर पर आसीन करने का। इस संक्रमण काल में जहां समस्याओं के गिरिगह्वर हैं, वहीं शुभ संकेत का एक प्रवाह भी निर्झरवत गतिमान होता दृष्टिगोचर हो रहा है। वह यह है कि भारत की युवा पीढ़ी में, हिन्दुत्वनिष्ठ प्रवाह में आकंठ स्नान करने की आकांक्षा जगी और बढ़ी है।

इस निर्णायक घड़ी में यह सत्य भी विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए कि तनिक सी दुर्बलता, इस राष्ट्र को शताब्दियों पीछे भी पटक सकती है तो दृढ़ता सहित पथ पर बढ़ते जाने की संकल्प शक्ति शताब्दियों के अन्तर को पाट कर राष्ट्र को ऐसा भव्य और विराट स्वरूप प्रदान कर सकती है, जिसके समक्ष विश्व का विभ्रान्त मानव नतमस्तक होकर उद्घोषित करे—**जय जगद्गुरु भारत।**

महात्मा वेदभिक्षु: की अमर वाणी

# योग के नाम पर

योग के नाम पर बढ़ता हुआ ढोंग कहीं इस पवित्र शब्द के प्रति घृणा उतपन्न न कर दे, यह भय आज भी उठ रहा है। नए-नए चेहरे योग के नाम पर धार्मिक जनों को ठग रहे हैं। विदेशों में तो योग का नाम सोना बटोरने का साधन बन गया है।

वस्तुत: योग नाम है उस काम का जिसमें हम अपने को परमात्मा से जोड़ते हैं। शरीर को प्रकृति से जोड़ने का नाम भोग और आत्मा परमात्मा के मिलन का नाम योग है। जो अपने को नहीं जानता, परमात्मा से मिला नहीं सकता वह योगी नहीं। फिर भी इस ओर बढ़ती हुई प्यास और उसके प्रति सच्चे योगियों की उदासीनता से ढोंग उभर रहे हैं।

हम देख रहे हैं कि बढ़ते पाखण्डों के पीछे जनता की छिपी वह भूख है, जिसकी अपूर्ति से अन्धविश्वास और गुरुडम जन्म लेते हैं। हम जब तक दूसरों के गुण और अपने दोष नहीं देखेंगे तब तक समस्या का निदान न हो सकेगा। आखिर क्यों जनसमूह पाखण्डों की ओर दौड़ता है? क्यों नकली अवतार चमक रहे हैं? कभी सोचा आपने?

कभी आपने अपने उत्सव आयोजन देखे? कभी उनके देखे—तुलना कीजिए। हमारे उत्सवों पर सब कुछ होता है सिवाय अध्यात्म के। उनके यहां पाखण्ड होता है पर अध्यात्म के नाम पर। सोचिए। झूठे अध्यात्म में जब इतनी शक्ति है तब यदि सच्चा अध्यात्म अमृत हम जनता को पिला सकें तो जनता किस तरह उमड़ेगी। हमारी ओर—

आर्य नेता विचारें और सच्चे योग तथा अध्यात्म प्रचार में लगें। हमारे उत्सव धार्मिक हों। राजनीति की चर्चाएं और आलोचनाएं बंद हों। यदि हम शुद्ध वैदिक अध्यात्म की गंगा प्रवाहित कर सकेंगे तो इस गंगा में स्नान के लिए जनसमूह उमड़ेगा, धरती स्वर्ग बनेगी और पाखण्ड स्वयं खण्ड-खण्ड हो जाएगा।

आर्य समाज को वैदिक धर्म प्रचार में लगाइए और योग से धरती को जीवन दीजिए।

**भारतेन्द्र नाथ**

*(जनज्ञान जून १९७२ से उद्धृत)*

# भाषण नहीं : काम

आज हम भाषण देने में जितने पटु हैं काम में उतने ही पिछड़े हुए। भाषण जोरों से देंगे पर करेंगे कुछ नहीं। हम कहने का मूल्य नहीं समझते।

बचपन में एक चौपायी सुनी थी—

**तुलसी या संसार में, बाप—बात हैं एक।**
**जाकी बात अनेक हैं, वाके बाप अनेक॥**

हम जो घोषणाएं करते हैं, उन्हें पूरा नहीं करते। जो योजनाएं बनाते हैं उन पर अमल नहीं होता। परिणाम स्वरूप जन-मानस में हम पर से विश्वास समाप्त हो जाता है। अपनी अकर्मण्यता जनित असफलता का दोष हम सदा दूसरों पर रख देते हैं पर कभी नहीं सोचते कि हमारा अपना अपराध क्या है?

३ वर्ष में सारा भारत आर्य समाज के गीत गा सकता है। धरती पर आर्य सिद्धान्तों की जय-जयकार गूंज सकती है यदि हम भाषण न देकर काम करें।

काम केवल काम, व्यवहार, आचरण ही हमें विजयी बना सकता है। असम्भव कुछ नहीं है यदि हम काम करें। भाषणों से दुनिया को बहकाया जा सकता है बदला नहीं जा सकता। सुधारक के उपदेश व्यक्ति को बनाते हैं। इस लिए सुधारक बन कर दुनिया को सुधारो। नयी धरती पर नया सवेरा लाओ।

*(जनज्ञान सितम्बर १९७२ से उद्धृत)*

# आर्य समाज क्या चाहता है?

संसार के इतिहास में बुराइयों और कष्टों को समाप्त करने के लिए जब भी क्रान्तियां हुई हैं, उन सभी क्रान्तियों का श्रेय जीवन की आहुतियां देकर तिल-तिल जलने वाली, परदुःखकातर, त्यागी-तपस्वी आत्माओं को ही प्राप्त हुआ है। लम्बी अवधि और चिर पीड़ा यातना सहन करने के पश्चात अवनि पर एक महान् संत, योगी और क्रान्तिकारी विभूति का प्रादुर्भाव हुआ। साधना के अविराम पथ पर चलता हुआ बालक मूलशंकर महर्षि दयानन्द के रूप में धरती पर ज्ञान और प्रकाश का साधन बना।

महर्षि दयानन्द योगी थे, क्रान्तिकारी थे, युग निर्माता थे और थे भविष्य-द्रष्टा। वे सत्य के उपासक थे, और थे सत्य की राह के निर्माण के इच्छुक। उन्होंने इसके लिये गालियों की, विष की मान-अपमान की और कष्टों की परवाह न की। बड़े-बड़े प्रलोभन उन्हें डिगा न सके, झुका न सके, भुला न सके। वे बढ़ते गए, बढ़ते रहे। अपनी धुन के पक्के एकाकी ही महर्षि सत्य का संबल और प्रभु का विश्वास साथ लिये अपनी बात कहते रहे।

संसार ने पहले उन्हें गालियां दीं, फिर उन्हें ढोंगी बताया और फिर नास्तिक और ईसाई। दुनिया के कहने को सुन महर्षि मुस्कराते रहे, दुनिया कहती रही और एक अवधि के बाद दुनिया ने हार मान ली। सत्य के प्रकाश ने अन्धकार की दीवारों को हिला दिया, मिटा दिया और सभी ने महर्षि के गौरव को जान उनके चरणों पर अपना मस्तक झुका दिया— और फिर ज्ञान की ज्योति दीप मालिका संसृति की भौतिक दीप पंक्तियों को निरखते-निरखते विदा हुई। धरती सूनी हो गई।

और ऐसे अवसर पर महर्षि दयानन्द के उत्तराधिकारी आर्य समाज ने महर्षि दयानन्द के कार्य को संभाला। आर्य समाज अपने महान् गुरु के चरण चिह्नों पर चलता हुआ बढ़ता गया। संसार की रुकावटें उसके मार्ग में बाधा न बन सकीं और परिणामस्वरूप युग निर्माण के लिये आर्य समाज ने जो कार्य किया है, वह इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों की कहानी है।

आर्य समाज संसार की महान् संस्था है। वह विश्वबन्धुत्व की भावना का प्रसारक है। समता, न्याय, प्रेम, सत्य और ज्ञान उसकी भावना के मूल हैं। अज्ञान अन्याय और अभाव का, मूर्ति पूजा, गुरुडम, अन्धविश्वास और भेदभावों का आर्य समाज विरोधी है।

आर्य समाज वर्तमान को सुधार भविष्य का निर्माण भूत के आधार पर करना चाहता है। संसार के समस्त जातिभेद, वर्गभेद, प्रांतभेद और राष्ट्रभेदों को समाप्त कर आर्य समाज सोलह संस्कारों, चार आश्रमों द्वारा वैयक्तिक जीवन का, कर्म पर आधारित और वर्णाश्रम प्रणाली द्वारा समाज का सुगठित निर्माण करना चाहता है। आर्य समाज जीवन का लक्ष्य भोग और भौतिकवाद से हटा कर त्याग और आध्यात्मिक आनन्द की प्राप्ति को मानव का लक्ष्य बनाना चाहता है। संक्षेप में आर्यसमाज एक महान् क्रान्ति का सूत्रपात करना चाहता है। यह क्रान्ति राज्यों की नहीं, अधिकारों की नहीं, अपितु विचारों की होगी।

यह निर्विवाद तथ्य है कि आर्य समाज का कार्य महान् है। उसका लक्ष्य सही है और उसकी विचारधारा सर्वमान्य है। किन्तु आज सभी के सामने प्रश्न यह है कि इतनी महान् विचारधारा, सत्य सिद्धान्तों और उन्नत आदर्शों का स्वामी होते हुए भी आर्य समाज संसार के वर्तमान अज्ञान, अशांति और कष्टों को दूर करने में सफल क्यों नहीं हो पा रहा? संसार क्यों बड़ी तीव्रता के साथ भोगवादी विचारधारा और गुरुडम के जाल में फंसता चला जा रहा है? यह प्रश्न है जिसका उत्तर आज हमने देना है। सोचना है।

उत्तर देने से पहले हमें एक बात बहुत ही निश्चित शब्दों में कहनी है और वह यह कि आर्य समाज अपने लक्ष्य में सफल हो सकता है, उसकी भावनाएं और आदर्श साकार रूप धारण कर सकते हैं यदि हम चाहें तो? और इसका सीधा सा तात्पर्य यह है कि आज आर्यसमाज के मार्ग में रुकावट विरोधी नहीं, अपने हैं! जो आर्य समाजी हैं वे ही नहीं चाहते कि आर्य समाज का प्रचार हो। मैं यह बात कहना चाहता हूं। साथ ही मेरा सबल अनुरोध यह भी है कि आर्य समाज के वर्तमान अधिकारी और नेता व शक्ति प्राप्त व्यक्ति ही आज आर्य समाज के सन्देश को न फैलने देने के लिए उत्तरदायी हैं।

महर्षि के निर्वाण के ७० वर्ष बाद (अब १३० वर्ष बीत चुके हैं—सम्पादक) आज क्या इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करने के लिये कोई तैयार है? विरोधी विचारधारा को रोकने के लिये क्या कोई जीवन की आहुति देने का संकल्प कर सकता

है? महर्षि के अधूरे कार्य तुम को पुकार रहे हैं। ऋषि भक्तो! महान् साधना का पथ तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। सिसकती मानवता तुम्हारी बाट देख रही है। बोलो, क्या तुम इन सभी की पुकार सुनोगे या गहरी निद्रा में पड़े असफलता के झोंकों में झूलते हुए ही अपनी सफलता के गीत गाते रहोगे?

आर्य समाज को सफल बनाना है तो सबसे पहले आर्य समाज के अन्दर ही क्रान्ति करनी होगी। वर्तमान कार्यक्रम और अयोग्य व्यक्तियों को बदलना होगा तथा आवश्यक रूप से अधिकारी ही कार्यकर्ता और कार्यकर्ता ही अधिकारी का पाठ क्रियात्मक रूप से पढ़ना होगा।

शक्ति उनके हाथ में आये, जो तपस्वी हों, वेद के विद्वान् हो, वेद पर आचरण करने वाले हों और जो कहते हों वही करते हों और जो करते हों वही कहते हों। जिनका मस्तिष्क दिन-रात वेद की विचारधारा के प्रचार के लिए ही कार्य कर रहा हो। फिर देखें, सफलता कैसे नहीं मिलती? और आज तो निष्क्रिय वातावरण के कारण अच्छे कार्यकर्ता समाज में आ ही नहीं रहे और जो आ भी रहे हैं, उन्हें प्रोत्साहन देने के स्थान पर कुचलने का ही प्रयत्न किया जाता है। अपने अधिकारों और गद्दियों के अभिमान में महर्षि दयानन्द के महान् लक्ष्य को स्वयं ही समाप्त किया जा रहा है। अब स्थिति सीमा से परे और असह्य हो चुकी है।

क्या हम महर्षि दयानन्द के उत्तराधिकारी इस गम्भीर वेला में अपने विचारों में परिवर्तन करने का प्रण नहीं ले सकते? केवल ऋषि दयानन्द की जय बोलने के स्थान पर उनकी आज्ञाओं और मन्तव्यों के पालन का निश्चय नहीं कर सकते? आज आवश्यकता है कि हम सच्चे अर्थों में स्वयं आर्य बनें और इसके पश्चात धरती के हर मानव को 'आर्य' बनाने का संकल्प लें।

आर्य समाज महान् है, उसके विचार महान् हैं। आवश्यकता केवल यह है कि हम आर्य समाज के संदेशवाहक भी महान् बन सच्ची महानता को संसृति में विस्तारित कर सकें।

परमात्मा करे कि आज ऋषि दयानन्द के चरणों में हम क्रियात्मक श्रद्धांजलि चढ़ाने की प्रेरणा पा ऋषि के अधूरे कार्यों को पूरा करने का संकल्प ले सकें।

आर्य समाज संसार का भाग-निर्माता बने और संसार सुख-शान्ति और संतोष की छाया में रहता हुआ अपने चरम लक्ष्य को पा सके। वह पा सकेगा, हम अपना सुधार कर बढ़ सकेंगे। संसृति की छाया मधुमय गीतों का अभिसार कर वरद पुष्प छितरा सकेगी और मानवता की सिसकन थिरकन में परिवर्तित हो नूतन अभिनव क्षणों का निर्माण कर सकेगी।

**भारतेन्द्र नाथ**

---

*(पृष्ठ ३२ का शेष)*

अपनी कम्पनी के बैनर तले भालजी ने 'महारथी कर्ण' (१९४४) तथा 'वाल्मीकि' (१९४६) जैसी फिल्में बनाई। दोनों ही फिल्मों में कुछ भूमिकाओं में पृथ्वीराज कपूर थे, जबकि 'वाल्मीकि' में नारद की भूमिका निभाई थी राजकपूर ने।

सन् १९४८ आते-आते भालजी पेंढारकर की कीर्ति और उनकी फिल्मों की लोकप्रियता पराकाष्ठा पर थी। वस, तभी दुर्भाग्य ने उन पर कहर बरपाया। भालजी हिन्दू महासभा के पदाधिकारी थे। १९४८ में महात्मा गांधी की हत्या के बाद जन-आक्रोश उन सभी लोगों को निगलने लगा, जो हिन्दू महासभा से जुड़े थे। इसी वजह से भालजी का स्टूडियो आग को भेंट कर दिया गया और हत्याकाण्ड की साजिश में शामिल होने के सन्देह में भालजी को पुलिस द्वारा गिरफ्तार कर लिया गया। उनकी करोड़ों की सम्पत्ति और अनेक महत्त्वपूर्ण फिल्में आग में जलकर नष्ट हो गई और भालजी राजा से रंक हो गए। सब कुछ मिट जाने के बाद भी एक लौह-पुरुष की भांति भालजी पेंढारकर का स्वाभिमान और आत्मविश्वास कायम रहा। उन पर मुकदमा चला और अदालत ने उन्हें पूर्णतः निर्दोष मानते हुए ससम्मान बरी कर दिया।

एक बार फिर से ५३ वर्षीय भालजी फिल्म निर्माण में जुट गए। १९५२ में 'छत्रपति शिवाजी' का निर्माण पूरा करने के साथ ही उन्होंने फिर से शिवाजी के जीवन पर आधारित फिल्मों के निर्माण का सिलसिला आरम्भ कर दिया। सन् १९८२ में बाल फिल्म सोसायटी के लिए बनाई गई 'बाल शिवाजी' के निर्माण तक यह क्रम जारी रहा। इसकी पटकथा और सम्वाद भालजी ने लिखे, जबकि फिल्म का निर्देशन उनके पुत्र प्रभाकर पेंढारकर ने किया। ८८ वर्ष की उम्र में उन्होंने 'शाबाश सूनबाई' का निर्माण किया।

भालजी पेंढारकर को 'चित्र तपस्वी' की उपाधि से अलंकृत किया गया। सन् १९९१ में उन्हें दादासाहब फाल्के पुरस्कार से सम्मानित किया गया। विस्मय की बात है कि भारत सरकार द्वारा सन् १९६१ में शुरू किया गया यह सम्मान भालजी पेंढारकर से बहुत बाद में सिनेमा जगत् में आए लोगों को उनसे बहुत पहले ही दे दिया गया। यही गनीमत रही कि मराठी सिनेमा के हीरक जयन्ती वर्ष (१९९२) में मराठी फिल्मों के पितामह भालजी पेंढारकर को याद करने का ख्याल भारत सरकार को आया तो सही।

२०, शास्त्रीनगर, मेन सैक्टर, भीलवाड़ा

सामयिक विचार

# संसदीय बहस का स्तर

अटल विहारी वाजपेयी सरकार को लोकसभा में विश्वास मत मिल जाने से राजनीतिक अस्थिरता की आशंका तो फिलहाल टल गयी है, पर बारहवीं लोकसभा से बेहतर संसदीय बहस की अपेक्षा रखने वालों को निराशा ही हुई है। जिस सदन में तीन पूर्व प्रधानमंत्रियों और आधा दर्जन से ज्यादा पूर्व मुख्यमंत्रियों समेत अनेक दिग्गज राजनेता उपस्थित हों, वहां महत्त्वपूर्ण मुद्दों पर स्वस्थ और सार्थक बहस की उम्मीद पाल लेना अनपेक्षित तो हरगिज नहीं है, पर बारहवीं लोकसभा में विश्वास मत प्रस्ताव पर हुई बहस के स्तर ने इस उम्मीद को ठेस पहुंचाई है। कह सकते हैं कि शुरूआती अपशकुन बसपा नेत्री मायावती ने किया, जो नव निर्वाचित लोकसभा अध्यक्ष जी० एम० सी० बालयोगी के आसन ग्रहण करते ही उत्तर प्रदेश के घटनाक्रम पर सदन में शोर मचाने लगीं और अन्ततः अपनी पार्टी के सदस्यों के साथ वाक आउट भी कर गयीं।

इसके बावजूद प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा अपनी सरकार में सदन का विश्वास व्यक्त करने के लिए रखे गये एक पंक्ति के प्रस्ताव पर लोकसभा में सार्थक बहस सम्भव थी। पर चन्द अपवादों को छोड़कर ज्यादातर सदस्यों-वक्ताओं ने इसे गम्भीरता से नहीं लिया। ऐसा नहीं है कि संसद में होने वाली बहस नीरस होना ही गम्भीरता का एकमात्र पैमाना है। हास-परिहास के पुट के साथ ही सार्थक संसदीय बहसें होती रही हैं। पर इसका अर्थ लोकसभा को ही हास-परिहास अथवा उससे भी आगे राजनीतिक कीचड़ उछाल का मंच बना देना नहीं है। दुर्भाग्यपूर्ण सच्चाई यह है कि संसद में शिक्षित सदस्यों का अनुपात और औसत स्तर भले ही बढ़ रहा हो, पर संसदीय बहस का स्तर लगातार गिर रहा है। खासकर टेलीविजन के बढ़ते प्रसार के बाद जबकि संसदीय बहसें और सदस्यों का व्यवहार-आचरण सिर्फ सदन में उपस्थित सदस्यों-पत्रकारों व दर्शकों तक सीमित नहीं रह गया है, सांसदों को अतिरिक्त सावधानी और तैयारी के प्रति सजग रहना चाहिए, पर इसका उलटा होता दिखायी पड़ता है।

बेहतर होता कि अटल बिहारी वाजपेयी सरकार के विश्वास मत प्रस्ताव पर बहस के दौरान भाजपा गठबंधन के घोषित राष्ट्रीय एजेंडे पर चर्चा होती। पर विपक्ष के अधिकांश धुरंधर मुद्दों पर बहस के बजाय छींटाकशी में ही समय बर्बाद करते रहे। केन्द्र में रक्षा मन्त्री और देश के सबसे बड़े राज्य उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री रह चुके मुलायम सिंह का ज्यादा जोर वाजपेयी जी को इस बात के प्रति आगाह करने पर ही रहा कि वह तो भाजपा के मुखौटा हैं, इसलिए मुख यानी लालकृष्ण आडवाणी से सावधान रहें। बिहार के पूर्व मुख्यमंत्री लालू प्रसाद यादव और दो कदम आगे बढ़कर भगवान श्रीकृष्ण के कथन 'मैया मोरी मैं नहीं माखन खायो' की बार-बार दुहाई देकर खुद को चारा घोटाले में निर्दोष बताते रहे। जैसे यही काफी न हो, उन्होंने फिर कृष्ण पर यादवों का एकाधिकार होने जैसी बात भी कही। अपनी कथनी-करनी से मुंह चुराने अथवा फिर उसे सही साबित करने के लिए ईश्वरीय अवतारों का इस तरह इस्तेमाल दुर्भाग्यपूर्ण ही कहा जा सकता है।

सबसे ज्यादा आश्चर्यजनक रहा वरिष्ठतम लोकसभा सदस्यों में से एक—माकपा के सोमनाथ चटर्जी द्वारा जसवंत सिंह व जयललिता की बातचीत की बाबत ऐसी टिप्पणी, जो उन्हें वापस लेनी पड़ी। सोमनाथ चटर्जी सरीखे वरिष्ठ सांसदों से तो यह अपेक्षा की जाती है कि वे अपेक्षाकृत नये सदस्यों के लिए आदर्श आचरण प्रस्तुत करें, पर जब वही इस तरह रौ में बहने लगेंगे, तो फिर नये सदस्य तो वैसा ही आचरण करते दिखायी पड़ेंगे, जैसे दिखायी पड़ते हैं। माना कि नये लोकसभा अध्यक्ष पिछले लोकसभा अध्यक्ष पी. ए. संगमा जितने अनुभवी नहीं हैं, पर संसदीय गरिमा बनाये रखने में सर्वाधिक अहम होता है सदस्यों का सहयोग। लोकसभा अध्यक्ष अथवा पीठासीन अधिकारी द्वारा बार-बार शांत रहने की अपील किये जाने के बावजूद सदस्यों द्वारा सदन में लगातार शोरगुल और वक्ताओं के भाषण के बीच में व्यवधान उत्पन्न करना निश्चय ही हमारे सांसदों के आचरण की कोई बेहतर तसवीर (टी. वी. के जरिये) आम जनता में पेश नहीं करता।

*(दैनिक ट्रिब्यून से साभार)*

## विजय मिली, विश्राम न समझो

भारत के मंगलमय भविष्य के लिए माननीय प्रधानमंत्री
अटल विहारी वाजपेयी जी को हार्दिक शुभकामनाएं।

पंडिता राकेश रानी, अध्यक्ष

**दयानन्द संस्थान**

# अमर आग है

❑ अटल विहारी वाजपेयी

कोटि-कोटि आकुल हृदयों में
सुलग रही है जो चिनगारी,
अमर आग है, अमर आग है।
उत्तर दिशि में अजित दुर्ग सा,
जागरूक प्रहरी युग-युग का,
मूर्तिमन्त स्थैर्य, धीरता की प्रतिमा सा,
अटल अडिग नगरपति विशाल है।
नभ की छाती को छूता सा,
कीर्ति पुञ्ज सा,
दिव्य दीपकों के प्रकाश में
झिलमिल-झिलमिल
ज्योतित मां का पूज्य भाल है।
कौन कह रहा हैउसे हिमालय?
वह तो हिमावृत्त ज्वालागिरि,
अणु-अणु कण-कण, गहवर-कन्दर,
गुञ्जित ध्वनित कर रहा है अब तक
डिम-डिम डमरू का भैरव स्वर।
गौरीशंकर के गिरि गह्वर
शैल शिखर, निर्झर, वन-उपवन
तरु तृण दीपित।
शंकर के तीसरे नयन की
प्रलय वह्नि में जगमग ज्योतित।
जिसको छू कर, क्षण भर ही में
काम रह गया था मुट्ठी भर।
यही आग ले प्रतिदिन प्राची
अपना अरुण सुहाग सजाती,
और प्रखर दिनकर की, कंचन काया,
इसी आग में पल कर
निशि-निशि, दिन-दिन,
जल-जल, प्रतिपल,
सृष्टि प्रलय पर्यन्त तमावृत
जगती को रास्ता दिखाती।
यही आग ले हिन्दमहासागर की
छाती है धधकाती।
लहर-लहर प्रज्वाल लपट बन
पूर्व पश्चिमी घाटों को छू,
सदियों की हतभाग्य निशा में
सोये शिलाखण्ड सुलगाती।
नयन-नयन में यही आग ले
कण्ठ-कण्ठ में प्रलय राग ले,
अब तक हिन्दुस्थान जिया है।
इसी आग की दिव्य विभा में,
सप्त सिंधु के कल कछार पर,
सुर-सरिता की धवल धार पर
तीर-तटों पर, पर्णकुटी में पर्णासन पर,
कोटि-कोटि ऋषियों-मुनियों ने
दिव्य ज्ञान का सोम पिया था।
जिसका कुछ उच्छिष्ट मात्र
बर्बर पश्चिम ने, दया दान सा,
निज जीवन को सफल मान कर,
कर पसार कर
सिर आंखों पर धार लिया था।
वेद-वेद के मंत्र-मंत्र की पंक्ति-पंक्ति में
पंक्ति-पंक्ति के शब्द-शब्द में,
शब्द-शब्द के अक्षर स्वर में,
दिव्य ज्ञान आलोक प्रदीपित,
सत्यं, शिवं, सुन्दरं शोभित,
कपिल, कणाद और जैमिनि की
स्वानुभूति का अमर प्रकाशन,
विशद विवेचन प्रत्यालोचन,
ब्रह्म जगत, माया का दर्शन।
कोटि-कोटि कंठों में गूंजा
जो अतिमंगलमय स्वार्गिक स्वर,
अमर राग है, अमर आग है।
कोटि-कोटि आकुल हृदयों में
सुलग रही है जो चिनगारी
अमर आग है, अमर आग है।
यही आग सरयू के तट पर
दशरथ जी के राजमहल में,
घन-समूह में चल चपला सी,
प्रगट हुई प्रज्वलित हुई थी।
दैत्य दानवों के अधर्म से
पीड़ित पुण्यभूमि का जन-जन,
शंकित मन-मन त्रसित विप्र,
आकुल मुनिवर-गण,
बोल रही अधर्म की तूती
दुस्तर हुआ धर्म का पालन।
तब स्वदेश-रक्षार्थ देश का
सोया क्षत्रियत्व जागा था।
राम-रूप में प्रकट हुई यह ज्वाला,
जिसने असुर जलाए देश बचाया
वाल्मीकि ने जिसको गाया।
चकाचौंध दुनिया ने देखी
सीता के सतीत्व की ज्वाला,
विश्व चकित रह गया देखकर
नारी की रक्षा-निमित्त जब
नर क्या वानर ने भी अपना,
महाकाल की बलि-वेदी पर,
अगणित हो कर
सस्मित हर्षित शीश चढ़ाया।
यही आग प्रज्वलित हुई थी
यमुना की आकुल आहों से,
अत्याचार-प्रपीड़ित ब्रज के
अश्रु-सिन्धु में बड़वानल बन।
कौन सह सका मां का क्रन्दन?
दीन देवकी ने कारा में,
सुलगाई थी यही आग, जो
कृष्ण-रूप में फूट पड़ी थी।
जिसको छू कर, मां के कर की कड़ियां
पग की लड़ियां चट-चट टूट पड़ी थीं
पाञ्चजन्य का भैरव स्वर सुन,
तड़प उठा आक्रुद्ध सुदर्शन,
अर्जुन का गाण्डीव भीम की गदा,
धर्म का धर्म डट गया,
अमर भूमि में, समर भूमि में,
धर्म भूमि में, कर्म भूमि में
गूंज उठी गीता की वाणी,
मंगलमय जन-जन कल्याणी।
अपढ़ अजान विश्व ने पाई
शीश झुका कर एक धरोहर।
कौन दार्शनिक दे पाया है
अब तक ऐसा जीवन दर्शन?
कालिंदी के कल कछार पर
कृष्ण कंठ से गूंजा जो स्वर
अमर राग है, अमर राग है।
कोटि-कोटि आकुल हृदयों में
सुलग रही है जो चिनगारी,
अमर आग है, अमर आग है।

# आपके पत्र

## शुभ स्वागतम नव सम्वत्सर
## विक्रमी सम्वत् २०५५

मंगलमय हो नव संवत्सर और हर्षोल्लास हर प्रांगण में।
सुन्दर सुरक्षित सुमन खिलें मेरी दिल्ली के उपवन में॥
रघुवर राजतिलक वेला में जय हो वीर हनुमान की।
छत्रपति शिवा, रवीन्द्र जयन्ती और जयन्ती महावीर की॥
जय तात्या टोपे, चाफेकर बन्धु जय जय उनके बलिदान की।
हेडगेवार, अम्बेडकर जन्म परजय हो प्यारे हिन्दुस्थान की॥
राव कुंवर, मंगल पांडे का बलिदानी इतिहास बताता है।
भीषण नरमेध बाग जलियां की भी स्मृति दिलाता है॥
दयानन्द का अमर स्मारक मां भारती को भाता है।
आर्य समाज के जनम दिवस को यही मधुमास सजाता है॥
इस मधुरिम सुन्दर वेला में मातृभूमि हुई अति हर्षित।
कदम-कदम पर मिले सफलता भारतवासी हों गर्वित॥

**शकुन्तला आर्या, महापौर दिल्ली**

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा विक्रमी संवत्सर दो हजार पचपन।
प्रातःकाल उठ सूर्योदय की नव किरणों के करिए दर्शन॥
पण ऋतुओं का देश मनोहर मलय पवन करता मोहित है।
स्वर्णादिक हीरा पन्ना बहुमूल्य धातुओं से शोभित है॥
गौरवमय सद्ज्ञान सुकीर्ति सुखप्रद स्वास्थ्य समृद्धि पूरित है।
इस पावन भारत भूमि पर जन्म मिले जग लालायित है॥
दिग् दिगन्त यश वाद्य बजें नित सबके गृह प्रांगण गुंजित हों।
सर्वांगीण करें उन्नति सब जन-जन के हृदय पुलकित हों॥
भारत का हर एक निवासी निषकण्टक निश्चिंत अभय हो।
दो हजार पचपन नव सम्वत् सुखद शांतिप्रद मंगलमय हो॥

**गुलाब सिंह राघव, एफ २६९ सी, दिलशाल गार्डन**

## विक्रमी सम्वत् की पूर्व सन्ध्या पर

विस्फोट, हत्या, बलात्कार, घोटाले
यही है आय-व्यय वर्ष दर वर्ष
जकड़ रखा है आत्मा को हमारी
विषाक्त आवृत्तियों ने,
छूट चुकी है बहुत पीछे हमारी उर्वरा चेतना,
कितना अच्छा हो अनुष्ठान करें हम
एक ऐसे आत्मार्पण यज्ञ का
होम दें जिसमें हम सारी तामसी वृत्तियां
और फिर कहें गर्व से

'अभिनव वर्ष मंगलमय हो'

**विनय कुमार सिंघल, किदवई नगर, नई दिल्ली**

## मंगल कामना

नव वर्ष मंगलमय हो। उत्कर्ष मंगलमय हो,
जन जन की भावना का उद्देश्य मंगलमय हो।
हिम श्रृंग, सिन्धु-गंगा आकाश मंगलमय हो॥
नभ के नक्षत्रगण का प्रकाश मंगलमय हो।
यह देश मंगलमय हो परिवेश मंगलमय हो॥
भाषा व भावना का उन्मेष मंगलमय हो।
वह भूत मंगलमय हो वर्तमान मंगलमय हो॥
भावी विचारधारा की सोच मंगलमय हो।
स्वरगीत मंगलमय हो संगीत मंगलमय हो॥
वीणा के तार की हर झंकार मंगलमय हो।
नवतंत्र मंगलमय हो गणतंत्र मंगलमय हो॥
सुरभित सुमन की कलिका का प्यार मंगलमय हो।
फल पुष्प मंगलमय हो हर वृक्ष मंगलमय हो॥
कुसुमित लता का सुन्दर सन्तान मंगलमय हो।
प्रभात मंगलमय हो मध्याह्न मंगलमय हो॥
दिनकर के शुभदिवस का अवसान मंगलमय हो।
शशांक मंगलमय हो प्रशान्त मंगलमय हो॥
विधु के विभावरी का वितान मंगलमय हो।
आचार मंगलमय हो विचार मंगलमय हो॥
जग में परस्पर सब का व्यवहार मंगलमय हो।
जंगल भी मंगलमय हो मंगल भी मंगलमय हो॥
नव वर्ष का यह आना सबको ही मंगलमय हो॥

**स्वामी विवेकानन्द जी महाराज, प्रभात आश्रम, मेरठ**

**सम्वत्सरोऽसि परिवत्सरोऽसि नवो नवो भवति जायमान्:** यजु० २७/४२

**मिटे अन्धेरा होय सवेरा निर्मल मन कर दे**
**घोर तमिस्र आर्य राष्ट्र की छिन्न भिन्न कदो॥**

भारतीय संस्कृति एवं हमारे आत्म गौरव के प्रतीक वर्ष प्रतिपदा (नव सम्वत्सर २०५५) रविवार, २९ मार्च १९९८ पर सृष्टि के आदिकाल से प्रतिष्ठित सार्वभौम वैदिक धर्म के पृष्ठ पोषक महान् संगठन "आर्य समाज" के स्थापना दिवस पर समस्त देशवासियों को हमारी हार्दिक शुभकामनायें। शुभकामनाओं सहित

**वेद प्रकाश मित्तल, ई-१०३, शास्त्रीनगर, मेरठ**

# जयन्ती समारोह हेतु श्री साहनी जी की शुभकामना

प्रिय बहन जी,

नमस्ते!

१४, १५ मार्च को होने वाले दयानन्द संस्थान के वार्षिकोत्सव के लिए भेजा आपका निमन्त्रण पत्र मिला। धन्यवाद।

आप जानती ही हैं कि मैं हमेशा आपके बुलावे पर पहुंचता हूं। इस बार भी उपस्थित रहने का पूरा प्रयत्न रहेगा। एक कठिनाई आ सकती है। इन दिनों हो रही राजनीतिक उठक-पटक इन दोनों तिथियों पर अपनी चरम सीमा पर होगी। इस वजह से एकदम "अवश्य पहुंचूंगा" कह सकना सम्भव नहीं है। आप स्वयं समझदार हैं। यदि नहीं पहुंचा तो इस कारण को ध्यान में रख कर आप अवश्य क्षमा करेंगी, ऐसा विश्वास है।

उत्सव की सफलता के लिए अपनी हार्दिक मंगलकामनाओं के साथ।

भवदीय

**केदार नाथ साहनी**

अध्यक्ष, भारतीय जनता पाटी, दिल्ली प्रदेश

# सम्पादक पंजाब केसरी की शुभकामना

प्रिय राकेश रानी जी,

दयानन्द संस्थान के २५वें वार्षिकोत्सव एवं महात्मा वेदभिक्षुः के जयन्ती समारोह के सम्बन्ध में आपका निमन्त्रण पत्र प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

किन्तु मैं अपनी पूर्व व्यस्तताओं के कारण आ नहीं पाऊंगा। क्षमा चाहता हूं। मैं, उत्सव की सफलता की हृदय से कामना करता हू।

आपका शुभचिन्तक

**विजय कुमार**

सम्पादक पंजाब केसरी, जालन्धर

---

ओ३म् तत्सत् अद्य श्री ब्रह्मणो द्वितीये प्रहरार्द्धे सप्तमे वैवस्वत मन्वन्तरेऽष्टविशति तमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे। १, ९६, ०८, ५३, ०८९९ सृष्टि सम्वत्सराय विक्रम सम्वत् २०५५ चैत्र शुक्ला प्रतिपदा आपके लिए नव वर्ष के रूप में मंगलमय हो। शुभकामना

**विश्वकर्मा फर्नीचर उद्योग**

दयानन्द नगर, बड़ौत रोड, बुढ़ाना मु० नगर (उ० प्र०)

दूरभाष : (०१३९२) ३११७

वेद विचार

# ज्ञान-विज्ञान का अनुपम स्रोत वेद

❑ डॉ० कपिलदेव द्विवेदी

**महर्षि दयानन्द** के अनुसार वेद विश्व भर के लिए प्रकाश-स्तम्भ है। इनमें आचार-संहिता के अतिरिक्त मानव-जीवन के लिए उपयोगी सभी शिक्षाओं का सार संगृहीत है। ज्ञान और विज्ञान में संबद्ध सभी पक्षों के मूल तत्त्व सूत्ररूप में इनमें विद्यमान हैं। वेद के मन्त्रों से इन गूढ़ रहस्यों को निकालना समुद्र से रत्नों को निकालने के तुल्य है। यह कार्य अत्यन्त दुष्कर है। इसके लिए वैदिक विद्वानों को अथक परिश्रम करना है। ऋग्वेद का कथन है कि वेद के मन्त्रों में देवों का निवास है। जो इस रहस्य को जानते हैं, वे ही वेदों का लाभ उठा सकते हैं।

**ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्, यस्मिन् देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति, य इत् तद् विदुस्त इमे समासते॥**—*ऋग्० १.१६४.३९*

इस मन्त्र में देवों के निवास से अभिप्राय है—गूढ़ रहस्यों की सत्ता एवं कतिपय वैज्ञानिक तत्त्वों का समावेश। अतएव आचार्य यास्क ने स्पष्ट रूप से कहा है कि—वेदों के मन्त्रों के रहस्य का साक्षात्कार ऋषि या तपस्वी ही कर सकते हैं।

**न ह्येषु प्रत्यक्षम् अस्ति, अनृषेरतपसो वा।** *निरुक्त १३.१२*

इसका अभिप्राय है कि वेदों के गूढ़ रहस्यों को जानने के लिए कठोर साधना और सूक्ष्म दृष्टि चाहिए। इसी दृष्टि से महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में उदाहरण-स्वरूप कुछ मन्त्रों को प्रस्तुत किया है और उनकी वैज्ञानिक व्याख्या की है। ऋषियों ने अपनी आर्ष दृष्टि से पंच तत्त्वों के विभिन्न वैज्ञानिक तथ्यों का साक्षात्कार किया था, अतः उन्हें ऋषि कहा जाता है। 'ऋषिदर्शनत्' गूढ तत्त्वों केसाक्षात्कार के कारण मनीषियों को ऋषि कहा जाता था। अतएव यास्क ने कहा है कि—

**साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः।** निरुक्त १.२०

अर्थात् ऋषियों ने गूढ़ तत्त्वों का साक्षात्कार किया था। इसमें आध्यात्मिक और वैज्ञानिक सभी तत्त्व सम्मिलित हैं। ऋग्वेद का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सूक्त (ऋग्० १०.१२५.१ से ८) 'वाग् आम्भृणी' सूक्त है। इसमें ८ मन्त्रों में वाक्तत्त्व की भाषाशास्त्रीय दृष्टि से अत्यन्त गूढ़ व्याख्या की गयी है। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान के प्रो० सईस ने अपने ग्रंथ 'साइन्स ऑफ लैंग्वेज' में इस सूक्त के विषय में कहा है कि—इन मन्त्रों में वैदिक ऋषि का वाक् तत्त्व के विषय में जो वक्तव्य है, वह बहुत ही गम्भीर, विचारपूर्ण, भाषाविज्ञान की दृष्टि से सत्य तथा बहुत ही दूरदर्शितापूर्ण है॥ इस सूक्त का एक मन्त्र है :-

**अहमेव स्वयमिदं वदामि, जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः।**
**यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि, तं ब्राह्मणं तमृषिं तं सुमेधाम्॥**

*ऋग्० १०:१२५.५*

अर्थात् सारे देवगण और मनुष्य वाक्तत्त्व की ही उपासना करते हैं। मेरी जिस पर कृपा दृष्टि होती है, वह तेजस्वी, तत्त्वज्ञानी, ऋषि और मनीषी हो जाता है। मैं वायु की तरह सारे संसार में व्याप्त हूं। मैं ही सारे लोकों का निर्माण करता हूं। मैं इस द्युलोक और पृथिवी से बाहर भी विद्यमान हूं।

**अहमेव वात इव प्र वामि आरभमाणा भुवनानि विश्वा।**
**परो दिवा पर एना पृथिव्या एतावती महिना सं बभूव॥**

*ऋग्० १०.१२५.८*

साधारणतया यह समझा जाता था कि भारतीयों को यह ज्ञात नहीं था कि पृथिवी घूमती है और सूर्य की परिक्रमा करती है। सूर्य अपने स्थान पर स्थित है। इस भ्रम का निवारण ऐतरेय ब्राह्मण और गोपथ ब्राह्मण से होता है। इनमें स्पष्ट रूप से कहा गया है कि न सूर्य उदय होता है और न अस्त होता है, केवल व्यवहार के लिए दिन के अन्त को सूर्यास्त और रात्रि के अन्त को सूर्योदय कहा जाता है। यह पृथिवी ही घूमती है।

**स वा एष (आदित्यः) न कदाचनास्तमयति,**

**नोदयति। यद् यदेनं पश्चाद् अस्तमयतीति मन्यन्ते, अह्न एव तदह्नं गत्वा, अथात्मानं विपर्यस्यतेऽहरेवाधस्तात् कृणुते रात्रीं परस्तात्।** *गोपथ ब्रा० उत्तर० ४.१०। ऐतरेय ब्रा० ३.४४*

चारों वेदों में निम्नलिखित मन्त्र आया है और इसमें स्पष्ट किया गया है कि पृथिवी सूर्य के चारों ओर परिक्रमा करती है।

**आयं गौ० पृश्निरक्रमीद् असदन्मातरं पुरः। पितरं च प्रयन् स्वः॥** *ऋग्० १०.१८९.१। यजु० ३.६। अथर्व० ६.३१.१। साम० ६३०*

यजुर्वेद में एक मन्त्र आया है, जिसमें कहा गया है कि केवल यह पृथिवी ही परिक्रमा नहीं करती है, अपितु सूर्य भी चक्कर लगाता है, अर्थात् सूर्य अपनी धुरी पर घूमता है। इसी प्रकार सारा संसार गतिशील है और घूमता है।

**समाववर्ति पृथिवी समुषाः समु सूर्यः। समु विश्वमिदं जगत्॥** *यजु० २०.२३*

यजुर्वेद में उल्लेख है कि सुपुम्ण नामक सूर्य की किरण चन्द्रमा को प्रकाश देती है। इसका अभिप्राय यह है कि चन्द्रमा में अपना प्रकाश नहीं है, अपितु वह सूर्य के प्रकाश से ही प्रकाशित होता है।

**सुपम्णः सूर्यरश्मिः चन्द्रमा गन्धर्वः।** यजु० १८.४०

इसी भाव को आचार्य यास्क ने कहा है कि सूर्य की एक किरण चन्द्रमा को प्रकाश देती है।

**अथाप्यस्य एको रश्मिः चन्द्रमसं प्रति दीप्यते। आदित्यतोऽस्य दीप्तिर्भवति॥** *निरुक्त २.६*

अथर्ववेद का कथन है कि हाइड्रोजन से सूर्य को ऊर्जा मिलती है। मन्त्र में हाइड्रोजन के लिए सोम शब्द का प्रयोग है।

**सोमेन आदित्या बलिनः।** *अथर्व० १४.१.२*

यजुर्वेद में भी हाइड्रोजन और हीलियम गैस का संकेत है। मन्त्र में हाइड्रोजन के लिये **'अपां रसः'** जल का सार भाग या गैसीय रूप शब्द आया है तथा हीलियम के लिए **'अपां रसस्य यो रसः'** प्रयोग आया है, अर्थात् जल के सारभाग हाइड्रोजन का भी जो सारभाग है, अर्थात् उच्चतम रूप है। **'सूर्ये सन्तं समाहितम्'** के द्वारा स्पष्ट किया गया है कि सूर्य में हाइड्रोजन और हीलियम दोनों गैस विद्यमान हैं।

**अपां रसम् उद्वयसं सूर्ये सन्तं समाहितम्। अपां रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तमम्॥** *यजु० ९.३*

विज्ञान के अनुसार सूर्य में ९० प्रतिशत हाइड्रोजन और ८ प्रतिशत हीलियम तथा अन्य द्रव्य २ प्रतिशत। सूर्य की सतह का तापमान ६ हजार डिग्री सेन्टीग्रेड है और अन्दर का तापमान लगभग १ करोड़ ३० लाख डिग्री सेन्टीग्रेड है। इस आन्तरिक ताप से हाइड्रोजन हीलियम के रूप में परिवर्तित हो जाता है, इसे Thermo nuclear Reactions कहा जाता है। गैसों के इन रूपान्तरणों के कारण सूर्य को निरन्तर विशाल ऊर्जा प्राप्त होती रहती है। सूर्य को अपनी इस ऊर्जा के लिए प्रति सेकेन्ड ५० लाख टन द्रव्यमान की आवश्यकता होती है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में वर्णन है कि सूर्य के चारों ओर गैस फैली हुयी है। इस मन्त्र में विशाल गैस के लिए **'शकमयं धूमम्'** अर्थात् महाशक्तियुक्त धूम शब्द का प्रयोग है।

**शकमयं धूमम् आरादपश्यम्।** *ऋग्० १.१६४.४३*

अथर्ववेद में सूर्य की सात किरणों का उल्लेख मिलता है और कहा गया है कि सूर्य में सभी रंग हैं।

**सप्त सूर्यस्य रश्मयः।** अथर्व० ७.१०७.१

**इन्द्रे नि रूपा हरिता मिमिक्षिरे।** अथर्व० २०.३०.३

अथर्ववेद में कहा गया है कि सूर्य की ७ प्रकार की किरणें ही ३ रूपों, अर्थात् उच्च, मध्य, निम्न रूपों को प्राप्त कर २१ प्रकार की हो जाती हैं। इनसे ही सभी वस्तुओं को रूप, रंग प्राप्त होता है।

**ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।** अथर्व० १.१.१। **विश्वा रूपाणि जनयन् युवा कविः।** अथर्व० १३.१.११

यजुर्वेद में सूर्य के लिए कहा गया है कि वह प्राणशक्ति अर्थात् आक्सीजन देता है और अपान अर्थात् कार्बन डाइआक्साइड को समाप्त करता है।

**अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती।** यजु० ३.७

ऋग्वेद में कहा गया है कि सूर्य में अक्षय धन है। वह सारे संसार को निरन्तर भोजन देता है अर्थात् सूर्य

की ऊर्जा से ही उत्तम कृषि और अन्न होता है।

**अप्सु सूर्ये महद्धनम्।** *ऋग्० ८.६८.९*

**अधारयद् हरितोर्भूरि भोजनम्।** *ऋग्० ३.४४.३*

सूर्य की आकर्षण शक्ति का वर्णन करते हुए कहा गया है कि सूर्य ने अपनी आकर्षण शक्तियुक्त किरणों से पृथिवी को रोका हुआ है। अन्य मन्त्र में सूर्य की आकर्षणयुक्त किरणों के लिए 'यन्त्र' शब्द का प्रयोग है।

**दधर्थ पृथिवीम् अभितो मयूखैः।** *यजु० ५.१६*

**सविता यन्त्रैः पृथिवीम् अरम्णात्।** *ऋग्० १०.१४९.१*

ऋग्वेद के एक मन्त्र में उल्लेख है कि सूर्य अपनी आकर्षण शक्ति से सारे संसार को रोके हुए है।

**एको अन्यच्चकृपे विश्वम् आनुषक्।** *ऋग्० १.५२.१४*

ऋग्वेद में ही अन्यत्र कहा गया है कि आकर्षण शक्ति से ही देवों ने द्युलोक, पृथिवी, अन्तरिक्ष और नक्षत्रों आदि को रोका हुआ है। मन्त्र में आकर्षण शक्ति के लिए ओजस् (तेज) शब्द का प्रयोग है।

**स्वर्णरम् अन्तरिक्षाणि रोचना, द्यावापृथिवी पृथिवीं स्कम्भुरोजसा।** *ऋग्० १०.६५.४*

ऋग्वेद के एक मन्त्र में इस सिद्धान्त का संकेत मिलता है कि मैटर अर्थात् द्रव्य को ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है और ऊर्जा को द्रव्य के रूप में। एक-दूसरे का परिवर्तन हो सकता है। वेद में द्रव्य के लिए अदिति (अक्षय प्रकृति) शब्द आया है और ऊर्जा के लिए 'दक्ष' (चेतना, ऊर्जा) शब्द। मन्त्र का कथन है कि अदिति से दक्ष अर्थात् द्रव्य से ऊर्जा की उत्पत्ति हुयी और दक्ष से अदिति की अर्थात् ऊर्जा से द्रव्य की।

**अदितेर्दक्षो अजायत, दक्षादु अदितिः परि।** *ऋग्० १०.७२.४*

ऋग्वेद और अथर्ववेद में भूमि के चारों ओर विद्यमान ओजोन की परत का उल्लेख है। ऋग्वेद में ओजोन की परत के लिए 'महत् उल्ब' शब्द आया है और उसे स्थविर अर्थात् स्थूल या मोटी परत कहा है। अथर्ववेद में इस ओजोन की परत का रंग हिरण्यय अर्थात् सुनहरी बताया गया है। उल्ब शब्द गर्भस्थ शिशु के ऊपर ढकी हुई झिल्ली के लिए आता है। यहां पर पृथ्वी-रूपी शिशु की रक्षा के लिए ओजोन की परत को महान् स्थूल उल्ब कहा गया है।

**महत् तदुल्वं स्थाविरं तदासीद् येनाविष्टितः प्रविवेशिथापः।** *ऋग्० १०.५१.१* **तस्योत जायमानस्य उल्व आसीद् हिण्ययः।** *अथर्व० ४.२.८*

ऋग्वेद में गैसों के लिए मरुत् शब्द का प्रयोग है। इनकी संख्या ७×७=४९ बतायी गई है और इन्हें बहुत शक्तिशाली कहा गया है। इनके विषय में कहा गया है कि इनमें से एक-एक की अनन्त शक्ति है।

**सप्त मे सप्त शाकिनः, एकमेका शता ददुः।** *ऋग्० ५.५२.१७*

यजुर्वेद में इन मरुतों अर्थात् गैसों के नाम और उनकी विशेषताओं का भी उल्लेख है। कुछ नाम ये हैं : शुक्रज्योति, चित्रज्योति, सत्यज्योति, ज्योतिष्मान्, सत्यजित्, सेनजित्, सुषेण आदि।

**शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्मान्।** *यजु० १७.८० से ८५*

रसायनशास्त्र से सम्बद्ध भी कुछ तथ्य प्राप्त होते हैं। जल के विषय में कहा गया है कि जल में अग्नि और सोम अर्थात् आक्सीजन और हाइड्रोजन दोनों तत्त्व विद्यमान हैं।

**अग्नीषोमौ विभ्रति आप इत् ताः।** *अथर्व ३.१३.५*

अग्नि को जल का पित्त बताया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि जल के मन्थन से अग्नि अर्थात् विद्युत् की उत्पत्ति होती है। **अग्ने पित्तम् अपाम् असि।** अथर्व० १८.३.५। यजुर्वेद में भी इसी तथ्य का वर्णन करते हुए कहा गया है कि अथर्वा ऋषि ने जल के मन्थन से अग्नि और विद्युत को उत्पन्न किया था।

**त्वामग्ने पुष्करादधि अथर्वा निरमन्थत।** *यजु० ११.३२*

ऋग्वेद का कथन है कि जल से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुयी है।

**विश्वस्य स्थातुर्जगतो जनित्रीः।** *ऋग्० ६.५०.७*

जल के विषय में कहा गया है कि इसमें सारे देव अर्थात् सारे तत्त्व विद्यमान हैं।

**यत्र देवाः सम गच्छन्त विश्वे।** *ऋग्० १०.८२.६*

वनस्पति विज्ञान की दृष्टि से भी कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य प्राप्त होते हैं। अथर्ववेद में क्लोरोफिल का वर्णन मिलता है। इसमें क्लोरोफिल के लिए अवि (रक्षक तत्त्व) शब्द आया है। इसकी विशेषता बताई गई है कि इसके

कारण ही वृक्ष वनस्पतियों में हरियाली रहती है।

**अविर्वै नाम देवता ऋतेनास्ते परीवृता। तस्या रूपेण इमे वृक्षा हरिता हरितस्रजः॥** *अथर्व० १०.८.३१*

अथर्ववेद का कथन है कि वृक्षों में जीव है और ये सांस लेते हैं।

**महद् ब्रह्म..... येन प्राणन्ति वीरुधः।** *अथर्व० १.३२.१*

अथर्ववेद का कथन है कि वृक्ष खड़े-खड़े सोते हैं। इससे ज्ञात होता है कि जीवित व्यक्ति के तुल्य कार्य करते हैं।

**अस्थुर्वृक्षा ऊर्ध्वस्वप्नाः।** *अथर्व० ६.४४.१*

सामवेद के एक मन्त्र में उल्लेख है कि वृक्ष-वनस्पतियां निरन्तर आक्सीजन छोड़ते हैं। मन्त्र में आक्सीजन के लिए 'समान वायु' का उल्लेख है।

**तमित् समानं वनिनश्च वीरुधो। अन्तर्वतीश्व सुवते च विश्वहा।** *साम० १८२४*

यान्त्रिकी की दृष्टि से भी कुछ मन्त्र बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। ऋग्वेद में वर्णन है कि अश्विनीकुमारों का रथ मन की गति के तुल्य वेग से उड़ सकता था और उसमें सुरक्षा के सैकड़ों साधन लगे हुए थे। वह एक लोक से दूसरे लोक तक जा सकता था।

**स वां रथो मनोजवा इयर्ति तिरो रजांस्यश्विना शतोतिः।** *ऋग्० ७.६८.३*

अश्विनीकुमारों के रथ अर्थात् विमान के लिए कहा गया है कि वह द्युलोक और पृथिवी में सब जगह आता है।

**रथो ह वां .. परि द्यावापृथिवी याति सद्यः।** *ऋग्० ३.५८.८*

अश्विनीकुमारों के विमान (रथ) का नक्शा दिया गया है कि वह त्रिकोण था। उसमें तीन सीट थीं और तीन पहिये थे।

**त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेन त्रिचक्रेण सुवृता यातमर्वाक्।** *ऋग्० १.११८.२*

आयुर्वेद की दृष्टि से वेदों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामग्री उपलब्ध है। इनमें सूर्यकिरण-चिकित्सा, वायुचिकित्सा, अग्निचिकित्सा, जलचिकित्सा, मृत्-चिकित्सा, मनोवैज्ञानिकचिकित्सा, हस्तस्पर्श चिकित्सा, शल्यचिकित्सा, विषचिकित्सा, पशुचिकित्सा, विविध रोग चिकित्सा आदि का विस्तृत वर्णन प्राप्य है। शल्य चिकित्सा की अतिश्रेष्ठ पद्धति का उल्लेख ऋग्वेद, अथर्ववेद और जैमिनीय ब्राह्मण में मिलता है। इनको मधुविद्या, अपिकक्ष्य विद्या और प्रवर्ग्य विद्या कहते थे। जैमिनीय ब्राह्मण में मधुविद्या और प्रवर्ग्य विद्या का उल्लेख मिलता है। प्रवर्ग्य विद्या को अपिकक्ष्य विद्या भी कहा जाता था। मधुविद्या में रसायन-शास्त्र, संसाधन-शास्त्र और मृतसंजीवनी शास्त्र आते हैं। संसाधनशास्त्र में टूटे अंगों को जोड़ने की विधि आती है। मृतसंजीवनी में मृत व्यक्ति को पुनर्जीवित करने की विधि बतायी गयी है। प्रवर्ग्य विद्या और अपिकक्ष्य विद्या में किसी के सिर को काटकर अलग रखना और किसी दूसरे जीव का सिर उसकेस्थान पर धड़ में जोड़ देने की विधि है।

ऋग्वेद के एक मन्त्र में मधुविद्या और अपिकक्ष्य विद्या का उल्लेख है। इन्द्र ने ये विद्याएं दधीचि को दीं और दधीचि ने इन विद्याओं का ज्ञान अश्विनकुमार को दिया।

**आथर्वणायाश्विना दधीचेऽश्व्यं शिरः प्रत्यैरयतम्। स वां मधु वोचद् ऋतायन् त्वाष्ट्रं यद् दस्रावपिकक्ष्यं वाम्।—** *ऋग्० १.११७.२२*

ऋग्वेद में शल्य क्रिया के कतिपय चमत्कारों का भी उल्लेख है। जैसे :-

१. **अन्धे को दृष्टि दान।** ऋग्० १.११७.१७

२. **बहरे को श्रवणशक्ति दान।** ऋग्० १.११७.८

३. **वृद्ध को युवा बनाना।** ऋग्० १.११७.१३

४. **शरीर के टूटे अंगों को जोड़ना।** ऋग्० ८.१.१२

वेदों में प्राकृतिक चिकित्सा का बहुत उल्लेख है। सूर्यकिरण-चिकित्सा के विषय में कहा गया है कि उदय होते हुए सूर्य के सामने बैठने से हृदय की सभी बीमारियां दूर होती हैं और शरीर में खून की कमी दूर होती है।

**उद्यन् अद्य मित्रमह, आरोहन् उत्तरां दिवम्। हृद्रोगं मम सूर्य, हरिमाणं च नाशय॥** *ऋग्० १.५०.११*

उदय होते हुए सूर्य की किरणों को सभी रोगों का इलाज माना गया है और कहा गया है कि इन

किरणों के सेवन से मनुष्य मृत्यु को जीत लेता है। वृक्ष-वनस्पतियों के लिए कहा गया है कि ये मनुष्य को जीवन शक्ति देती हैं। इसका अभिप्राय यह है कि वृक्षों से मनुष्य को आक्सीजन प्राप्त होता है और उससे मनुष्य को ऊर्जा की प्राप्ति होती है।

**वीरुधो वैश्वदेवीः उग्राः पुरुषजीवनीः।** *अथर्व० ८.७.४*

ओषधियां और वनस्पतियां मानवमात्र की रक्षक हैं, अतः इन्हें माता कहा गया है।

**ओषधीरिति मातरः, तद् वो देवी रूप ब्रुवे।** *ऋग्० १०.९७.४*

वृक्ष वनस्पतियां वस्तुतः भगवान् रुद्र के रूप हैं। ये विष पीते हैं और अमृत उगलते हैं। ये कार्बन डाइआक्साइड रूपी विष पीते हैं और आक्सीजन रूपी अमृत उगलते हैं। यह है शिव का विषपान और अमृतदान। इसीलिए युजुर्वेद के १६वें अध्याय में रुद्र को वृक्षों का स्वामी, गुल्मों का स्वामी आदि कहा गया है।

**वृक्षाणां पतये नमः, ओषधीनां पतये नमः। वनानां पतये नमः, कक्षाणां पतये नमः। नमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यः।** *यजु० १६. १७ से १९*

ऋग्वेद में वृक्षों को काटने का निषेध है। कहा गया है कि वृक्ष प्रदूषण को रोकते हैं, अतः इन्हें मत काटो।

**मा काकम्बीरम् उद्बृहो वनस्पतिम् अशस्तीर्वि हि नीनशः।**

*ऋग्० ६.४८.१७*

अथर्ववेद में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि पृथिवी के हृदय को, मर्मस्थलों को, चोट न पहुंचाओ। जितना हम पृथिवी को खोदकर जल, तेल, आदि निकालते हैं, उसकी पूर्ति भी करें।

**यत् ते भूमे विखनामि, क्षिप्रं तदपि रोहतु। मा ते मर्म विमृग्वरि, मा ते हृदयमर्पिपम्।** *अथर्व० १२.१३५*

अथर्ववेद और मैत्रायणी संहिता आदि में स्पष्ट आदेश दिया गया है कि हम पृथिवी, जल और वृक्ष वनस्पतियों को दूषित न करें और उन्हें हानि न पहुचावें।

**मा अपो हिंसीः मा ओषधीर्हिंसीः।** *यजु० ६.२२*

**द्यां मा लेखीः, अन्तरिक्षं मा हिंसीः।** *यजु० ५.४३*

**पृथिवीं दृंह, पृथिवीं मा हिंसीः।** *मैत्रा० २.८.१४*

वेदों में जहां ज्ञान और विज्ञान की बातों का भंडार है, वहीं विश्वशान्ति, विश्वबन्धुत्व, विश्वकल्याण, राष्ट्रीय उन्नति, सामाजिक उन्नति, आर्थिक समृद्धि और पारिवारिक सौमनस्य आदि का भी प्रमुखता से वर्णन है। अथर्ववेद का कथन है कि इस पृथिवी पर कोई भी भूखा और प्यासा न रहे।

**स्वराज स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रममुष्मै दत्त। जनभृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त। विश्वभृत स्थ राष्ट्रदा राष्ट्रं मे दत्त॥**

*यजु० १०.४*

यजुर्वेद में स्पष्ट रूप से उल्लेख है कि वेदों का ज्ञान मानवमात्र के लिए है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र तथा अन्य सभी के लिए यह वेदों का ज्ञान है।

**यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः। ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्यय च स्वाय चारणाय च।** *यजु० २६.२*

राष्ट्रीय उन्नति सबका कर्त्तव्य है। इसके लिए हम बलिदान होने को उद्यत रहें। पृथिवी हमारी माता है, हम इसके पुत्र हैं। पुत्रवत् मां के यश की वृद्धि करना हमारा कर्त्तव्य है।

**वयं राष्ट्रे जागृयाम पुरोहिता।** *यजु० ९.२३*

**वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम।** *अथर्व० १२.१.६२*

**माता भूमिः पुत्रो अहं पृथिव्याः।** *अथर्व० १२.१.१२*

अन्त में मैं उन सभी भारतीय एवं पाश्चात्य मनीषियों को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूं जिन्होंने वेदों के उद्धार के लिए अपना जीवन अर्पित किया है। वह अपनी उन्नति, राष्ट्रीय उन्नति और विश्वहित के लिए वेदों का स्वाध्याय आवश्यक है। वेदों के स्वाध्याय से ही जीवन पवित्र और उन्नत होगा।

**इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः॥**

*ऋग्० १०.१४.१५*

निदेशक, विश्व भारती अनुसंधान, ज्ञानपुर (भदोही)

रामनवमी पर विशेष

# विश्व पुरुष राम और भारत की एकता

□ डॉ० रामप्रसाद मिश्र

विश्व पुरुष राम के प्रति श्रद्धा-भक्ति अत्यन्त प्राचीन काल से रही हैं कोई समय था जब सुदूर पश्चिम तक उनका प्रभाव व्याप्त था। मिश्र के रामसीम या रामशेण नामक प्रतापी सम्राट, बाइबिल में ईसा के एक पूर्वज का 'राम' नाम, पश्चिमी एशिया के रामअल्लाह तथा रामथा (राम स्थल) जैसे नगर, राम (रोम) जैसा विश्वविश्रुत शाश्वत नगर इत्यादि अनेक प्रमाण आज भी विवेच्य हैं। इटली तो आर्य और भारतीय प्रभाव से आपूर्ण देश कहा जा सकता है जहां 'राम' (रामा) नगर है, 'सीता' (सेत) पहाड़ी है, 'रावण' (रावना) नगर है और जहां का इतिहास 'अगस्त्य' (आगसूस) जैसे प्रतापी सम्राट के स्वर्ण युग पर गर्व करता है। इटली का राष्ट्रीय महाकाव्य और लैटिन साहित्य का गौरव ग्रंथ 'ऐविड' (ऐनियड) भारत के उल्लेखों से सम्पन्न है और दोनों राष्ट्रों के प्राचीनतम सम्बन्ध का प्रमाण है। इधर दक्षिण-पूर्व एशिया में लंका, थाईलैंड, इंडोनेशिया इत्यादि में राम कथा, राम प्रतिमा, रामलीला इत्यादि का प्रचलन आज भी विद्यमान है। चीनी और थाई इत्यादि भाषाओं में रामायण प्राप्त हैं।

जहां तक भारत का सम्बन्ध है, राम का प्रभाव अन्यतम है। जिन्होंने जनकपुर (नेपाल) मिथिलांचल (बिहार) से लेकर श्री लंका तक हिमालय के अंचल से सागर पाट तक एक विराट राष्ट्र की नींव रखी इसलिए आदिकवि वाल्मीकि ने "इमुद्र इव गाम्भीर्ये, धैर्येण हिमवान इव' कहकर मानो आसेतु हिमाचल समग्र भारत को राम की विराट मूर्ति ही सिद्ध कर दिया है। उन्होंने ऋषि अगस्त्य एवं पुलस्त्य के कार्यों को पूर्णता प्रदान की। वनवासी जातियों को शेष समाज से एकाकार किया, केवटादि से नैकट्य स्थापित किया। राम की समता करने वाला मानवतावादी नेता एवं राष्ट्र निर्माता विश्व के इतिहास में कोई नहीं हुआ। अयोध्या, सीतामढ़ी, प्रयाग, चित्रकूट, पंचवटी, ऋष्यमूक, रामेश्वरम् आदि तीर्थ राम से सम्बद्ध हैं। रामनवमी, विजयादशमी, दीपावली और होली के पर्व राममय हैं। संस्कृत में वाल्मीकि, व्यास, कालिदास और भवभूति। हिन्दी में तुलसीदास, केशवदास, हरिऔंध और मैथिलीशरण। तमिल में कम्बन, बंगला में कृत्तिवास तथा रामवतार (काव्य) के रचनाकार गुरु गोविन्द सिंह इत्यादि महाकवियों के उच्चस्तरीय काव्य अथवा नाटक राम को सरलतापूर्वक विश्व साहित्य का सर्वश्रेष्ठ नायक सिद्ध कर देते हैं।

कोई भी ऐसी भारतीय भाषा नहीं, जिसमें राम पर रामायण या स्फुट काव्य की सृष्टि न हुई हो। बौद्धों में 'दशरथ जातक' और जैनियों में स्वयंभू-रामायण का प्रभाव है, भले ही वह उनकी सुविधाओं के अनुकूल होने के कारण सार्वभौम न कहा जा सके। निर्गुण मार्गी कहे जाने वाले कबीर, नानक इत्यादि संतों का साहित्य भी राम नाम से आपूर्ण है, रहीम इत्यादि अनेकानेक मुसलमान कवियों ने राम पर स्फुट काव्यसृजन किया है। अतएव, क्या हिन्दू और क्या मुसलमान, क्या जैन और क्या बौद्ध, क्या कबीर और क्या रहीम और क्या नानक, क्या देववाणी संस्कृत और क्या राष्ट्रवाणी हिन्दी और क्या क्षेत्र वाणियां, यत्र तत्र सर्वत्र राम का पावन प्रभाव स्पष्टतः दृष्टिगोचर होता है। राम भारत की आत्मा हैं—पर्वों में, तीर्थों में, साहित्यों में सर्वत्र।

**वाल्मीकि रामायण का उत्तरकाण्ड परवर्ती और प्रक्षिप्त है इसे प्रायः सभी विद्वान् स्वीकार करते हैं, क्योंकि युद्धकाण्ड के अन्त में राम का अयोध्या आगमन, रामराज्य और काव्य समापन स्पष्टतः वर्णित है। उत्तरकाण्ड महाकाव्य का अंग न होकर स्फुट और असम्बद्ध कथाओं का संग्रह मात्र है। अतएव इसके आधार पर संबूक प्रकरण और सीता त्याग की कथाओं को प्रामाणिक मानना और राम की आलोचना करना न बुद्धिसंगत है, न न्याय संगत।** ये कथाएं उन परवर्ती युगों में गढ़ी गई जब वर्णाश्रम व्यवस्था को अस्पृश्यता से विकृत कर दिया गया था और नारी की अवमानना की जाने लगी थी। गुह, निषाद, शबरी, वानर जाति इत्यादि के मित्र राम शूद्र विरोधी कैसे हो सकते थे? यदि राम शूद्र विरोधी होते तो स्वयं वेदों के ज्ञाता ऋषि

वाल्मीकि ही उन पर महाकाव्य कैसे लिखते? रैदास और नाभादास उनके भक्त होते? जगजीवन राम रामकथा के प्रेमी होते? तुलसीदास जैसे विश्व कवि ने वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड को प्रक्षिप्त मानते हुए उसकी सम्पूर्ण उपेक्षा की है।

राम का पिता और विमाता को प्रसन्न रखने के लिए त्याग, तेरह वर्षों तक सीता के साथ रहकर भी तपश्चरण और ब्रह्मचर्य पालन, पितृ-प्रेम, भ्रातृ-प्रेम; पत्नी-प्रेम और एक पत्नीव्रत, सेवक-प्रेम, प्रजा-प्रेम, वीरत्व, नम्रभाव इत्यादि गुण किसी भी युग में आदर्श ही माने जाएंगे। वे आदर्शों के लिए लड़े, व्यक्तिगत लाभ के लिए नहीं विजित नगरों तक में नहीं घुसे। पराजितों के बंधुओं को ही राज्य सौंपे। उन्होंने देशभक्ति का यह अतुलनीय आदर्श प्रस्तुत किया।

**इयं स्वर्णमयी लंका न मे लक्ष्मण रोचते,**
**जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी॥**

गुरु गोविन्द सिंह ने स्वयं एवं गुरु नानकको रामवंशी माना है। नेपाल का राजवंश अपने को रामवंशी मानता है। मेवाड़ का प्रतापी सिसोदिया राजवंश अपने को रामवंशी मानता रहा है। और तो और पाकिस्तान (जो सांस्कृतिक दृष्टि से भारत का ही एक अंग है) के निर्माता मोहम्मद अली जिन्ना की दैनन्दिनी में लिखित वे मार्मिक तथ्य भी अब स्वयं पाकिस्तानियों ने प्रकाशित कर दिए हैं जिनके अनुसार उन्हें इस बात का गर्व था कि उनके पूर्वज कुशपुर (कसूर) के निवासी क्षत्रिय (खत्री) थे और वे राम के वंशज हैं।

**यदि कोई विराट भारतीय संस्कृति की समग्रता का किसी एक व्यक्ति में 'दर्शन' करना चाहे तो राम में सुगमतापूर्वक कर सकता है। यदि कोई मानवता की समग्रता का किसी एक व्यक्ति में 'दर्शन' करना चाहे तो राम में सुगमतापूर्वक कर सकता है।**

१४, सहयोग अपार्टमेंट, मयूर विहार-१, दिल्ली-९१


# आखिर वेद क्या है?

## आज के युग में

# "वेदों की प्रासंगिकता"

**श्री अरविन्द के एक अत्यन्त मार्मिक, ज्ञानवर्धक एवं खोजपूर्ण निबन्ध का भाषान्तर**

३२ पृष्ठ की नयनाभिराम कवरयुक्त सुन्दर पुस्तिका
डाक व्यय सहित १५/- अग्रिम भेजकर मंगाएं।

**श्री अरविन्द चेतना समाज**

(शिक्षात्मक न्यास पंजीकृत)
६५६२/९, चमेलियान रोड, दिल्ली-११०००६
फोन : ०११-३५५६२१२, फैक्स : ०११-७५२३२००

# मां का खोया हुआ बेटा : विक्रम सम्वत् का प्रणेता

रात्रिं की निस्तब्धता को भंग करती हुई, एक कुटिया में से रुदन की ध्वनि आ रही थी। भीतर एक वृद्धा थी जिसके नेत्रों की ज्योति मन्द हो चली थी उन ज्योतिहीन नेत्रों के भीतर से उष्ण आंसुओं की धार बहाती हुई वह रो रही थी। उसका एकलौता जवान लड़का जो उसके जीवन का एक मात्र आश्रय था बर्बर शकों के आक्रमणों में मारा गया था। अचानक द्वार खटखटाने की ध्वनि हुई। बुढ़िया ने पूछा इस अर्ध रात्रि में कौन है? उत्तर मिला 'मां' मैं हूं। मां शब्द मात्र से ही बुढ़िया का हृदय आनन्द से झूमने लगा। भावाकुल दशा में वह द्वार की ओर दौड़ी। एक सुन्दर इकहरे बदन दुहरी छाती वाला युवक बुढ़िया का चरण स्पर्श करने लगा। बुढ़िया ने उसे हृदय से लगा कर प्रेमाश्रुओं से अभिनन्दन किया। 'बेटा' तू जीवित है? मां मैं तेरी सेवा के लिए आया हूं, पर बेटा इतने दिनों गुम रहा? नहीं मां, युद्ध भूमि में व्यस्त रहा? बेटा तेरी आवाज कुछ बदल गई है? हाथ से स्पर्श करते हुए मां ने पुनः कहा— 'तेरा शरीर भी कुछ बड़ा है। 'मां काल बीतने से कुछ अन्तर हो भी जाता है।' यह कहकर नवयुवक ने बुढ़िया के चरण दबाने शुरू किए। रात्रि भर बुढ़िया की सेवा कर प्रातः काल नवयुवक ने कहा—'मैं राजदरबार में नौकरी के लिये जा रहा हूं सन्ध्या को आऊंगा।' मां को कुछ सन्देह तो हुआ किन्तु नवयुवक का प्रेम तथा सेवा भाव देखकर उसने यही सोचा कि मेरे अपने पुत्र के सिवा और कोई ऐसा व्यवहार नहीं कर सकता। प्रतिदिन रात्रि को नवयुवक आकर मां की सेवा करता तथा सूर्योदय होते-होते वह चला जाता। एक दिन बुढ़िया को पता चल ही गया कि वह नवयुवक और कोई नहीं है स्वयं दुःखभंजक, न्यायादर्श, महाराज शकारि विक्रमादित्य हैं जो रात्रि को वेष बदल कर अपनी प्यारी प्रजाओं के दुःख भंजन के लिए घूमते हैं, तथा दुखियों के आंसू पोंछते हैं। अपना सारा वात्सल्य उस तेजस्वी युवक पर लुटाते हुए वृद्धा ने रुन्धे कण्ठ से कहा—'महाराज! आप सारे भारत के चक्रवर्ती सम्राट होते हुए भी मेरी जैसी भिखारिन की झोंपड़ी में पधारे तथा स्वयं मेरे पुत्र बनकर मेरी सेवा करते रहे। मैं अपना सर्वस्व देकर भी इस उपकार का बदला नहीं चुका सकती। हे विक्रम! जब तक चांद और सूरज रहें तेरा नाम अमर रहे। वृद्धा के लुप्त ज्योति नेत्रों से कृतज्ञता के शीतल अश्रुबिन्दु गिरने लगे। उस वृद्ध माता के आशीर्वाद में स्वयं भारत माता का अपने इस तेजस्वी पुत्र के लिये आशीर्वाद निहित था। सम्भवतः उसी के प्रताप से आज तक महाराज विक्रमादित्य भारत की कोटि-कोटि सन्तानों के हृदयदेश पर राज्य कर रहे हैं। विक्रमादित्य नाम में ही कुछ जादू है जो गत २० शताब्दियों से भारतीयों के हृदय में एक अद्‌भुत प्रेरणा प्रवाहित करता रहा है। भारतीय हृदय के लिये विक्रमादित्य केवल ऐतिहासिक व्यक्ति ही न रह कर राष्ट्रीय जीवन का एक उज्ज्वल ध्येयतारा भी बन गया है। पिछले १००० वर्षों की पराधीनता की लम्बी विकराल रात्रि में भी उसी प्रकाशमान आदित्य के दर्शन के लिये तरसते हुए ही हम जीवित रहे हैं। श्री कन्हैया लाल मणिकलाल मुन्शी के शब्दों में विक्रमादित्य का तेजस्वी नाम भारतीयों के मानसपटल पर अमिट रूप से अंकित हो चुका है। उसका कारण समझाते हुए वे लिखते हैं—भगवान परशुराम में दिव्य तेज था किन्तु ये इतने भयानक थे कि जनगण इनसे प्रेम नहीं कर सकते थे। श्री कृष्ण में देवत्व भी था, व धर्मरक्षा के लिये कृत संकल्प थे, किन्तु उन्होंने स्वयं ताज नहीं पहना। अशोक ने धर्म रक्षा की किन्तु राज्य तो उसे पहले ही सुरक्षित रूप से बाप-दादा से मिला था। विक्रमादित्य का प्रभाव इन सबसे अधिक हुआ क्योंकि वह पूर्ण मानव था। उसने शकों को खदेड़ कर एक शक्तिशाली एवं छत्र राज्य का निर्माण किया, उसने साहित्य एवं कला को महान प्रोत्साहन दिया और धर्म की रक्षा की, सबसे बढ़कर दुखियों एवं दीनों का दुःख दूर किया। वह परशुराम, श्रीकृष्ण, बुद्ध तथा अशोक की स्मृतियों का समन्वय बनकर आया तथा उसने राष्ट्र के हृदय में एक प्रेम तथा श्रद्धा का अलौकिक स्थान बना लिया।

नव वर्ष प्रतिपदा का मंगलमय पर्व कितना माधुर्यपूर्ण तथा उल्लासप्रद है। अपने उस गौरवशाली अतीत की स्मृति मात्र से कोटिशः भारतीयों के वक्षस्थल

गर्व से फूल उठते हैं, ग्रीवाएं स्वाभिमान से उन्नत हो जाती हैं तथा अपने पूर्व पुरुषों के स्नेह से स्पंदित उनका छोटा सा भावुक हृदय एक बार उस स्वर्ण युग प्रणेता, हूण, शक-प्रमृति दुष्टल विजेता नवसंस्थापक, धर्मरक्षक, प्रजावत्सल, सम्राट श्रेष्ठ वीर विक्रमादित्य के पुण्य स्मरण से पुलकित होकर नृत्य करने लगता है। विक्रम सम्वत् के प्रणेता महाराज विक्रमादित्य कौन है, यह विश्व के इतिहासकारों को चुनौती है। आज से २०१५ वर्ष पहले भारतीय इतिहास में एक नूतन युग का प्रारम्भ करने वाले महाराज विक्रमादित्य अवश्य ही कोई अमित तेजस्वी, महाप्रतापी महापुरुष हुए होंगे। इसमें सन्देह के लिए कोई स्थान नहीं। जिस विक्रम का न्याय लोक विश्रुत है, जिसके भूमि में दबे हुए सिंहासन पर अनजाने में बैठ जाने पर गडरिये का लड़का भी सदा न्याय कर सकता है, जिसके राज्य में प्रजा सर्वाधिक सुखी एवं सम्पन्न थी, जिसकी वैताल पच्चीसी की कथाएं आज तक गृह युद्ध में कही सुनी जाती हैं, जिसकी प्रशस्तियां आज तक मध्य भारत के लोकगीतों में गूंजती हैं, जो महाकवि कालिदास का परममित्र एवं साहित्यिकों का कलाकारों का अपूर्व आश्रयदाता था, उस महान विक्रमादित्य को भारत का बच्चा-बच्चा जानता है। उनके लिए और कोई राजा, महाराजा कल्पित भले ही हो, पर विक्रमादित्य तो उन सबके लिए एक यथार्थ सत्य है। उनके लिए केवल वह २०१५ वर्ष पूर्ण जीवित था अपितु उनके हृदय के प्रत्येक स्पन्दन में वह आज भी जीवित है। भगवान राम के पश्चात राज्य का कोई सर्वश्रेष्ठ उदाहरण उन्होंनेदेखा है तो वह सम्राट विक्रमादित्य के समय में। जिस सम्वत् में हमारी जाति की पिछले दो सहस्र वर्षों की कहानी अंकित है जिस संवत् के अनुसार आज तक हमारे धार्मिक कृत्य होते हैं, जिस सम्वत् का वर्णन हमारे धर्मग्रंथों के पुराने ग्रंथों में भी पाया जाता है, जिस सम्वत् के पवित्र नाम का उच्चारण कर हम सारे शुभ संकल्प करते आए हैं, जो केवल पत्थर के शिलालेख पर ही नहीं हमारे हृदय पटलों पर भी अमिट रूप से अंकित हो चुका है, उस महान विक्रम सम्वत् के प्रणेता कोई कल्पित विक्रमादित्य हों यह कितना हास्यास्पद है, सम्वत् का प्रणयन एक जाति की जीवन गाथा में एक अविस्मरणीय घटना होती है। वह युगों तक अपनी छाप छोड़ जाती है। अतः विक्रम सम्वत् एवं उसके प्रणेता सम्राट विक्रमादित्य का भरत सुतों की संस्कृति में एक अमर स्थान प्राप्त कर लेना सम्वत् तथा सम्वत् प्रणेता दोनों की ऐतिहासिकता के पक्ष में सबसे प्रबल प्रमाण है।

कोई भतृहरि शतक के अमर गायक योगिराज गोरखनाथ जी के अमर शिष्य भृतहरि जी को सम्राट विक्रम का बड़ा भाई मानते हैं। भतृहरि के संसार से विरक्त हो जाने पर विक्रम ने अंवति का सिंहासन ग्रहण किया तथा पश्चिमोत्तर की ओर से आने वाले शकों को परास्त कर उन्होंने शकारी की उपाधि प्राप्त की। गीता प्रेस द्वारा प्रकाशित हिन्दू संस्कृति अंक में यही मत व्यक्त किया गया है। पंडित भगवद्दत रिसर्च स्कालर का मत है कि ईसा से ५७ वर्ष पहले आंध्र देश के प्रतापी राजा शूद्रक ने विदेशी आक्रमणकारियों को भारत से बाहर धकेल कर विक्रमादित्य की उपाधि धारण की तथा विक्रम सम्वत् प्रारम्भ किया। पुराणों में सम्मान के साथ विक्रम सम्वत् को ही कृत सम्वत् (कृत युग, सतयुग का सम्वत्) तक कहा गया है।

डॉ० जायसवाल तथा श्री जयचन्द्र विद्यालंकार के मतानुसार आंध्रवंश के महाराज गौतमी पुत्र सातकर्णि ने प्रथम शती ईसा पूर्व में उज्जैन गुजरात के शक महाक्षत्रप नहपान को परास्त करके विक्रमादित्य की उपाधि धारण की तथा विक्रम सम्वत् आरम्भ किया। क्योंकि उज्जैन के मालवगणों ने शकों को परास्त करने में उसकी सहायता की थी इसलिये इसी सम्वत् का दूसरा नाम मालवसम्वत् प्रसिद्ध हुआ। इस मत में संभाव्य सत्य भी है किन्तु एक बात बड़ी विचित्र है। श्री विद्यालंकार तथा श्री जायसवाल दोनों इसी विक्रमादित्य को शालिवाहन मानते हैं। वस्तु स्थिति यह है शालिवाहन तो जाति में स्वयं शक था। कर्नल टाड के मत में शकराज 'गज' जिसके नाम से गजनी बसा उसी (गज) का पुत्र शालिवाहन भाग कर भारत आया, उसने हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया तथा महाराष्ट्र के तीर्थ पैठण में राजधानी बनाई। इसी शालिवाहन ने शक संवत्सर चलाया जो विक्रम सम्वत् से ७८ वर्ष पीछे है। यह बड़ी दुःख भरी वार्ता है कि स्वतन्त्र भारत की सरकार ने भारत को विदेशी बर्बर शब्दों के आक्रमण को मुक्त करने वाले शकारि विक्रमादित्य के सम्वत् को मान्यता न देकर, बर्बर आततायियों के स्मारक शक सम्वत् को राजकीय सम्वत् घोषित कर दिया है। भारतीय प्रजा के लिए यह एक लांछन की बात है। *(संकलित)*

# जलियांवाला बाग : भगतसिंह और शहादत

❑ राकेश रानी

**पुण्यभूमि** भारत, ऋषियों की साधना स्थली आर्यावर्त्त ब्रिटिश दासता की श्रृंखलाओं में आवद्ध थी। माता भूमि पुत्रोऽहम् के वैदिक उद्घोष से प्रेरणा प्राप्त कर भारत भूमि के वरेण्य सपूतों ने स्वदेश की विपन्नावस्था पर दृष्टिपात किया। उनका हृदय अपमान की ज्वाला से दग्ध हो उठा। उन्होंने देखा कि जिस शस्य श्यामला, सुजलाम् सुफलाम् पुण्यभूमि के मस्तक पर हिमगिरि की रजत हित मंडित मेखला राजमुकुट के तुल्य विद्यमान है, गंगा, यमुना, सरस्वती और शतद्रु जिसका कंठहार है एवं विंध्य मेखला है करधनी, वही पितृभूमि पराधीन है, जिस वरदायिनी भारत माता के चरण तल को नील सिंधु जल अहर्निश धोता है। उसी के गले में अंग्रेजी दासता का तौक, जगद्गुरु के पद पर आसीन आर्यावर्त्त का यह अपमान उनके कलेजे में शूल सा चुभने लगा। १८५७ में असफल रहे स्वातन्त्र्य समर और क्रान्ति के महायज्ञ की पूर्णाहुति का अनुष्ठान पुनः प्रखर हो उठा। देश के कोने-कोने में तरुणाई मचल उठी और वेदों की पावन ऋचाओं से गुंजित पंचनद (पंजाब) की पावन धरती ने सत्तावन् की क्रान्ति के समय बरती गई उपेक्षा के कलंक को उष्णरक्त से धोने का सद् संकल्प ग्रहण कर लिया। जिस आक्रोश के शमन हेतु ८ जुलाई १९१८ को ब्रिटिश राज्य सत्ता द्वारा मोन्टेगु चेम्सफोर्ड रिपोर्ट की घोषणा से भारतवासियों के मन में प्रज्वलित हुई स्वतंत्रता की अग्नि को बुझाने और उनके अरमानों को कुचलने हेतु रोलेट समिति का गठन हुआ। उसका नितांत विक्षोभजनक प्रतिवेदन १५ अगस्त १९१८ को प्रकाशित हुआ तो फरवरी, १९१९ में विदेशी सरकार ने एक विधेयक भी प्रस्तुत कर दिया। इसमें जनता की स्वतन्त्र्य आकांक्षाओं को कुचलने हेतु पुलिस को व्यापक अधिकार दिए जाने की व्यवस्था थी। दिल्ली में इसके विरुद्ध ६ अप्रैल १९१९ को पूर्ण हड़ताल रही। आंग्ल सत्ताधीशों का क्रोध और भी अधिक भड़क उठा और निरपराध नागरिकों पर गोली वर्षा कर उन्होंने अपनी रोष जनित पिपासा को बुझाने का उपक्रम किया।

दमन चक्र से स्वातन्त्र्य लक्ष्मी के महान् पुजारियों के हृदय में जल रही स्वतंत्रता की ज्योति भी बड़वानल के तुल्य विस्फारित हो उठी। समग्र देश ने अंगड़ाई ली। पंजाब की ऐतिहासिक नगरी अमृतसर में भी अत्याचार के विरुद्ध रोष की अभिव्यक्ति हो उठी। कूटनीति और प्रपंच के पुजारी अंग्रेज अधिकारियों ने १३ अप्रैल १९१९ को अमृतसर के जलियांवाला बाग में एक जनसभा की घोषणा करा दी। सहस्त्रों निश्शस्त्र नर-नारी जलियांवाला बाग में बैशाखी के पावन पर्व पर एकत्रित हो गए। वे अपने नेताओं के भाषणों की प्रतीक्षा में थे। तभी अचानक बिना किसी पूर्व चेतावनी के डायर नामक अंग्रेज अधिकारी ने निहत्थी जनता पर गोली वर्षा करने का आदेश दे दिया। ब्रिटिश नराधमों ने जो सत्ता के दर्प और मद में अंधे थे, १६०० कारतूस दागे। और मानवीय इतिहास का वह जघन्य कांड घटित हुआ कि जिसमें सैकड़ों आबाल वृद्ध नर-नारी गोलियों का शिकार हो गए। स्वयं को सभ्यता की प्रसारक और प्रचारक कहने का दंभ करने वाली अंग्रेज जाति जलियांवाला बाग कांड के फलस्वरूप अपने दामन पर लगे बदनुमा दाग को कदापि न धो सकेगी।

रक्त का फाग खेला गया। अनेकों जयिष्णु जवां मर्द देशभक्तों ने जलियांवाला बाग से उठी आह और कराह को अपने अन्तस की टीस बना लिया और फिर इस कांड का प्रतिशोध भी लिया। पंजाब की पावन धरा में जन्मे अमर हुतात्मा सरदार ऊधम सिंह ने सर माइकेल ओडवायर को लन्दन में ही अपनी पिस्तौल का निशाना बनाया। यह घटना घटित हुई द्वितीय महायुद्ध के समय। और तदुपरांत देश विदेश में भारतीय क्रान्तिकारी और भी अधिक सक्रिय हो उठे। बंगभूमि में स्वातन्त्र्य लक्ष्मी के पुजारियों ने विदेशी शासकों के विरुद्ध हथियार संभाले तो सरजा शिवाजी का महाराष्ट्र भी पीछे न रहा। पेशवाओं की नगरी पूना में पुनः स्वातन्त्र्य साधकों के साधना केन्द्र खुल गए तो महर्षि दयानन्द की चरण रज से पावन बम्बई महानगरी में भी क्रान्तिकारी टोलियां सक्रिय हो उठीं। गंगा यमुना और सरयू के शीतल जल से सुसिंचित उत्तर प्रदेश की धरा में भी नवजीवन का

संचार हुआ। **"अपनों का निकृष्टतम शासन भी विदेशियों के सर्वोत्तम शासन की अपेक्षा श्रेयस्कर है।"** देव दयानन्द की इस प्रेरक वाणी ने आर्य समाज के सम्पर्क में आए अनेकों युवकों को **'आर्य कभी दासता स्वीकार नहीं करता'** के तथ्य की अनुभूति करा दी। देवता स्वरूप भाई परमानन्द और पं० श्यामजी कृष्ण वर्मा सरीखे महर्षि के अनुगामियों के सम्पर्क में आकर लोहे से कुन्दन बने अनेकों जयिष्णु जवान स्वदेश की स्वतंत्रता हेतु जीवनदान का व्रत धारण कर कर्म क्षेत्र में उतर पड़े। अमर हुतात्मा सरदार भगत सिंह, पं० राम प्रसाद बिस्मिल एवं स्वातन्त्र्य सेनानियों के अमर सेनापति पं० चन्द्रशेखर आजाद ऐसे ही नरपुंगव थे। "मेरा रंग दे बसंती चोला" और "इन्कलाब जिन्दाबाद" ही थे उनके अमर गीत।

उस युग को विप्लव युग की ही संज्ञा देना सार्थक होगा। देश के छोर-छोर से फूट पड़ा था विप्लव संदेश। आत्मदानी किशोरों तरुणों का वह अटूट क्रम। वे बलिवेदी पर एक के बाद एक उछल-उछल कर चढ़ते गए—अपने जीवन प्रसून स्वातन्त्र्य लक्ष्मी के श्री चरणों में समर्पित करना ही उन्होंने स्वकर्त्तव्य माना। वे निःशेष हो गए। इसीलिए तो आए थे वे। वस्तुतः विप्लवी को कोई मार ही नहीं सकता। वह तो देश की पुकार पर ही युगों-युगों से आते रहे हैं और आगे भी आएंगे। सापेक्ष-निरपेक्ष सरीखे शब्द यहां व्यर्थ होंगे और मंगल-अमंगल की ऊहापोह भी अनुचित। हिंसा और अहिंसा का तर्क भी यहां अपराधी की श्रेणी में आ खड़ा होगा। सृष्टि के इस उद्दाम भावावेश पर तो किसी का भी वश नहीं चल पाता। यह तथ्य विश्व के घटनाक्रम से सुप्रमाणित है कि अन्यायी और अत्याचारी पर सदय होने वाले देश के इतिहास का निर्माण नहीं कर पाते। आग्नेय युग के वे सहस्रों ज्ञात-अज्ञात उच्छिन्न मस्तक अपने रक्त से यह चिर सत्य संपुट कर गए हैं। विश्व के कूटनीतिक भ्रमजाल में फंसकर भारत के नेता इस सार्वकालिक यथार्थ की उपेक्षा न करें यही सरदार भगत सिंह सरीखों के शहीदी रक्त का शाश्वत संदेश है। अमृतसर की खूनी वैशाखी का यही अमर आह्वान है।

किन्तु आज तो विषम वेला है। कायरता और पलायनवाद शील और साधुता की चादर में स्वयं को लपेटने को प्रयासरत है। आज तो प्रत्येक व्यक्ति ही शास्ता और मसीहा बनने के फेर में रमकर विप्लवी इतिहास को भी अपने रंग में रंगने पर उतारू है। आज के कई बुद्धिजीवी ज्ञान बघारते हैं कि भारत के वे किशोर तरुण विप्लवी पूर्णतः नादान थे, कई तो उन्हें अज्ञानी भी कह डालते हैं। क्या यह अपने गौरवपूर्ण इतिहास की चरित्र हत्या करना ही नहीं है?

आज भी उस युग के अनेकों विप्लवियों के परिवार जीवन छकड़े को चलाने के लिए आपदाओं, बाधाओं और कठिनाइयों से जूझ रहे हैं। आज आवश्यकता है कि यह महान् देश और इसकी जनता त्याग-बलिदान की परम्परा में प्रोज्ज्वल जीवन और विगत अतीत में उन प्रज्वलित प्राण समिधाओं की कदर करे जो स्वतंत्रता के महायज्ञ में सर्वस्व समर्पण की निष्काम भावना से स्वेच्छया आहुत होने आई थीं—अनुदिन वर्षानुवर्ष जलती रही थीं, छीजती रही थीं। आज भी उनमें से कई प्रेरणा पुंज हमारे मध्य हैं, कितने हताश, कितने निराश। आज उपेक्षा और विस्मृति के प्रबल झंझावात में उन टूटते हुए महाप्राणों को देखकर एक दारुण व्यथा उभर आती है।

स्वतंत्रता के २५ वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी हम स्वदेश के बलिदानी देश रत्नों का सही मूल्यांकन नहीं कर पाए। हां उंगली काटकर शहीदों में शामिल हो जाने वाले अनेक फसली बटेरों ने निश्चित रूप से ही दोनों हाथों स्वतंत्रता की फसल बटोरी है।

## आर्य समाज को भुला न देना

आओ तुम आर्य समाज को भुला न देना
उपकार से जीवन को गवां न देना।
स्वामी दयानन्द जग में न आता
आर्य समाज का जन्म न होता
ढोंग पाखण्ड की रीत मिटा कर
धर्म के जिसने दीप जलाए
शान को इसकी भुला न देना।
ऋतु बदले या जीवन बीते
वेद धर्म का पाठ न छोड़ें
जीवन में बसें कर्म सुहाने
गाएंगे सब मिल कर यह तराने
आन धर्म की भुला न देना॥

**विनय सितिजोरी, रिण्येर जी पोस्त, मोरिशस**

# महात्मा वेदभिक्षुः जयन्ती समारोह
# वेद प्रचार संकल्प एवं राष्ट्ररक्षा सम्मेलन सम्पन्न

दिल्ली: दयानन्द संस्थान एवं जनज्ञान के संस्थापक महात्मा वेदभिक्षुः की सत्तरवीं जयन्ती एवं संस्थान का वार्षिकोत्सव दिनांक १४ एवं १५ मार्च को इब्राहीमपुर ग्राम के समीप स्थित महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम, वेद मन्दिर में उत्साहपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ।

१४ मार्च को प्रातःकाल प्राची विश्व में पौ फटते ही मन्दिर की यज्ञशाला वेद मन्त्रों की ध्वनि से गुंजित हो उठी। यजमान का आसन दयानन्द संस्थान के अनन्य सहयोगी एवं समारोह के स्वागताध्यक्ष श्री रमेश चन्द्र चोपड़ा एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती निर्मल चोपड़ा तथा श्री राकेश भार्गव एवं उनकी सहधर्मिणी श्रीमती ऋचा भार्गव तथा ब्रह्मा का आसन स्वामी सत्यपति जी ने ग्रहण किया। इस अवसर पर स्वामी जगदीश्वरानन्द जी का वेदोपदेश हुआ और रमेशचन्द, श्रीमती नलिनी देशपांडे (महाराष्ट्र) ब्र० सुमेधाजी के भजन हुए।

अपराह्न दो बजे से प्रारम्भ हुआ स्वामी सत्यपति जी की अध्यक्षता में वेद प्रचार संकल्प सम्मेलन। जिसका उद्घाटन किया दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ० कृष्ण लाल ने तथा मुख्य वक्ता थे सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय। आचार्य श्रोत्रिय तथा डॉ० कृष्ण लाल ने अपने सारगर्भित प्रवचनों में वेद को ज्ञान-विज्ञान का अक्षय भण्डार बताया। श्री अरविन्द चेतना समाज के संचालक श्री ज्ञानचन्द्र ने महर्षि दयानन्द को वेदों का पुनरुद्धारक बताते हुए आज के युग में वेदों की प्रासंगिकता पर प्रकाश डाला।

डॉ० शिव कुमार शास्त्री, श्री राम बिहारी विश्वकर्मा, डॉ० सारस्वत मोहन मनीषी, स्वामी सत्यपति तथा स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती ने वेदों का भाष्य जनसाधारण को उपलब्ध कराने में महात्मा वेदभिक्षुः एवं दयानन्द संस्थान के योगदान को अनुपम बताया तथा उनके कार्य को और गतिमान करने का आह्वान किया। वक्ताओं ने यह भी कहा

(शेष पृष्ठ २५ पर)

*(१) महात्मा वेदभिक्षुः जयन्ती समारोह के अवसर पर वेदभिक्षुः सेवाश्रम में आयोजित यज्ञ का एक दृश्य।*

ओ३म्
महात्मा वेदभिक्षुः जयंती समारोह

(पृष्ठ २३ का शेष)

कि वेद प्रचार के संकल्प का परिपालन ही युग की मांग है। वेद द्वारा निर्धारित पथ के अनुगमन से ही राष्ट्र अभाव, अनाचार और भ्रष्टाचार जैसी विभीषिकाओं से मुक्त हो सकेगा। सम्मेलन में श्री रमेशचन्द्र चोपड़ा एवं सुश्री प्रतिभा ने वेद के महत्त्व को प्रतिपादित करने वाले भीत प्रस्तुत किए। उपस्थित जनसमुदाय ने वेद प्रचार का संकल्प भी ग्रहण किया।

दिनांक १५ मार्च को प्रातःकाल यज्ञशाला में यज्ञ सम्पन्न हुआ। यजमान थे श्री अभिनव आर्य एवं ब्रह्मा थे स्वामी सत्यपति। इस अवसर पर सुश्री समेधा आर्या का वेदापेदश भी हुआ। अपराह्न दो बजे से भव्य पंडाल में पूर्वी दिल्ली क्षेत्र के पूर्व सांसद श्री हरदयाल देवगुण की अध्यक्षता में गौ एवं राष्ट्र रक्षा सम्मेलन आरम्भ हुआ। जिसका उद्घाटन किया राजधानी की महापौर श्रीमती शकुन्तला आर्या ने विशिष्ट अतिथि थे परोपकारिणी सभा के मंत्री श्री गजानन्द आर्य तथा दिल्ली के पूर्व कार्यकारी पार्षद तथा क्षेत्र के वयोवृद्ध आर्य नेता चौधरी हीरासिंह तथा मुख्य वक्ता थे आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय तथा श्री चमन लाल क्षत्रिय, आचार्य विजय गुप्त एवं डॉ० सारस्वत मोहन मनीषी।

वक्ताओं ने अपने भाषणों में कहा कि वेद ने जहां मानव मात्र के कल्याण का सन्देश दिया है, वही मातृभूमि के प्रति अडिग निष्ठा का आह्वान भी उसके अनेक मन्त्रों में निनादित हुआ है, जिसे राष्ट्ररक्षा का महामन्त्र कहा जा सकता है। उन्होंने महात्मा वेदभिक्षुः द्वारा वेद प्रचार और हिन्दू संगठन तथा गोरक्षा के क्षेत्र में किए गए योगदान को अनुकरणीय बताया। इस अवसर पर श्रीमती निर्मल चोपड़ा, श्रीमती निर्मल सेठ तथा श्रीमती प्रभा खुराना एवं शीला जी के सुमधुर भजन भी हुए। जयन्ती समारोह के स्वागताध्यक्ष श्री रमेश चन्द्र चोपड़ा एवं संयोजक श्री बलजीत सिंह मान तथा श्री सत्यपाल घई ने अभ्यागतों का स्वागत किया तथा दयानन्द संस्थान की अध्यक्ष पं० राकेश रानी ने समारोह की सफलता में सहयोग के लिए सभी का आभार व्यक्त किया।

---

⇦

*(१) गौ एवं राष्ट्ररक्षा सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए परोपकारिणी सभा के मंत्री श्री गजानन्द आर्य। बांई ओर हैं दिल्ली की महापौर श्रीमती शकुन्तला आर्या, दयानन्द संस्थान की अध्यक्ष पंडिता राकेश रानी, विश्व हिन्दी परिषद् न्यूयार्क के संस्थापक श्री रामेश्वर अशांत, स्वामी सत्यपति जी व स्वामी जगदीश्वरानन्द। (२) सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए सुप्रसिद्ध वैदिक विद्वान् आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय, श्री बनारसी सिंह मंच पर आसीन हैं श्री चमन लाल क्षत्रिय, दिल्ली के पूर्व कार्यकारी पार्षद् चौ० हीरा सिंह एवं पंडिता राकेश रानी व मंच संचालन करते हुए वरिष्ठ पत्रकार श्री बनारसी सिंह। (३) वैदिक वंदना प्रस्तुत करते हुए सुश्री प्रतिभा। वेद प्रचार संकल्प सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राध्यापक डॉ० कृष्णलाल। (४) सम्मेलन में उपस्थित श्रोतागण।*

*(५) जयन्ती समारोह को सम्बोधित करते हुए आचार्य विजय गुप्त एवं दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापक डॉ० सारस्वत मोहन 'मनीषी'। मंच पर आसीन हैं स्वामी सत्यपति जी एवं संस्थान के आचार्य स्वामी जगदीश्वरानन्द। (६) वैदिक भजन प्रस्तुत करते हुए श्रीमती निर्मल चोपड़ा, श्रीमती निर्मल सेठ, श्रीमती प्रभा खुराना एवं शीला जी।*

# अमरीका में हिन्दी और वेद प्रचार को समर्पित श्री रामेश्वर अशांत का अभिनन्दन

**दिल्ली** : महात्मा वेदभिक्षुः जयन्ती समारोह के अवसर पर न्यूयार्क से पधारे विश्व हिन्दी परिषद् के संस्थापक तथा भारतीय संस्कृति और वेद प्रचार अभियान में संलग्न श्री रामेश्वर अशांत का हार्दिक अभिनन्दन किया। संस्थान की अध्यक्ष पंडिता राकेश रानी ने उन्हें शाल और श्रीफल भेंट किया।

*(शेष पृष्ठ ३९ पर)*

*(१) विश्व हिन्दी परिषद् न्यूयार्क के संस्थापक अध्यक्ष एवं गोवा स्वाधीनता संग्राम के प्रमुख सेनानी श्री रामेश्वर अशांत का शाल ओढ़ाकर अभिनन्दन करते हुए पंडिता राकेश रानी। अशांत जी को महर्षि दयानन्द का चित्र भेंट कर रहे हैं समारोह के उपस्वागताध्यक्ष श्री आर० डी० कौशिक। साथ में खड़ी हैं पंडिता राकेश रानी और स्वागताध्यक्ष श्री रमेशचन्द्र चोपड़ा। श्री अशांत जी का परिचय करा रहे हैं श्री बनारसी सिंह। (२) राजधानी दिल्ली की महापौर श्रीमती शकुन्तला आर्या श्री अशांत को वेद भाष्य समर्पित करते हुए। (३) कार्यक्रम के संयोजक श्री बलजीत सिंह मान श्री अशांत का स्वागत करते हुए।*

१३ अप्रैल पर विशेष

## अमृतसर की खूनी वैसाखी से क्षुब्ध हुए

# अमर शहीदों का बलिदान

❑ राम विहारी विश्वकर्मा

अंग्रेज हमारे देश में व्यापारी के रूप में आये और भारत की जनता ने 'अतिथि देवो भव' की परम्परा के अनुसार इन व्यापारियों को सब तरह की सुविधाएं दीं, लेकिन धीरे-धीरे उन व्यापारियों ने देश में फूट डालकर उसके टुकड़े-टुकड़े करके अपना कब्जा जमा लिया। १८५७ में भारतीय सिपाहियों ने पहली बार विद्रोह करके भारत मां को विदेशी दासता से मुक्ति दिलाने का प्रयास किया लेकिन वे विफल रहे। महाराष्ट्र में वासुदेव बलवन्त फड़के ने १८७३ में युवा समाज का संगठन शुरू किया। जगह-जगह व्यायामशालाएं खोलीं। इस क्रान्तिकारी को राजद्रोह के आरोप में आजीवन कारावास की सजा दी गई लेकिन युवकों ने खासतौर पर गरमपंथी विचारधारा वाले युवकों ने यह निश्चय कर लिया कि इस देश को आजादी भीख मांगने से नहीं मिलेगी। उनका दृढ़ विचार था कि स्वतंत्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और उसे हम लेकर रहेंगे।

भारत में अंग्रेजों ने तथाकथित शासन सुधार लाने के लिए लार्ड साइमन की अध्यक्षता में एक कमीशन नियुक्त किया था। यह कमीशन ३ फरवरी, १९२८ को जब भारत पहुंचा तो पूरे देश में हड़ताल रखी गई और जगह-जगह 'साईमन गो बैक' के नारे लगाये गये। लाहौर में नौजवान भारत सभा के सदस्यों ने भी नारे लगाने की योजना बनाई। तत्कालीन पुलिस अधीक्षक स्काट ने असिस्टेंट सुपरिंटेंडेंट सान्डर्स को रास्ता साफ करने की जिम्मेदारी सौंपी। लाहौर में लाला लाजपतराय और नौजवानों की टोली पर सान्डर्स ने लाठी बरसायीं। लाला लाजपत राय को इतनी चोट लगी कि कुछ दिनों पश्चात् चोट के कारण उनकी मृत्यु हो गई। भगत सिंह ने इस दुखद घटना पर प्रस्ताव रखा कि लाला जी पर जो लाठियां बरसाई गयी हैं उसी के कारण उनकी मृत्यु हुई है। इससे समूचे राष्ट्र का अपमान हुआ है और नौजवान भारत सभा इस अपमान का बदला लेकर रहेगी। उन्होंने लाठी चलाने वाले पुलिस सुपरिंटेंडेंट स्काट को गोली का निशाना बनाने का निश्चय किया। लाला लाजपत राय की मृत्यु के एक महीने बाद चन्द्रशेखर आजाद, भगत सिंह, राजगुरु और जयगोपाल ने पुलिस स्टेशन के सामने सान्डर्स को गोलियां से भून डाला। वे मारना तो चाहते थे स्काट को जिसने सान्डर्स को लाठी चार्ज का आदेश दिया था लेकिन दोनों का आकार-प्रकार ऐसा था कि पहचानने में कुछ भूल हो गई और भ्रम वश उन्होंने सान्डर्स को मार डाला। इस तरह उन्होंने लाला लाजपत राय की मृत्यु का बदला ले लिया। इन जवानों ने भारत मां की बेड़ियां काटने के लिए अपने पैरों में बेड़ियां डाल लीं।

२३ वर्ष की उम्र में भगत सिंह एक युगपुरुष बन गये थे। अपने खून से उन्होंने स्वतंत्रता के जिस पौधे को सींचा, वह विशाल वृक्ष बन गया। भगत सिंह को वीरता का यह सबक पुश्तैनी तौर पर प्राप्त हुआ था। एक बार जब वे छोटे थे और छोटे-छोटे तिनके जमीन में गाड़ रहे थे तो उनके पिता सरदार किशन सिंह ने पूछा कि बेटे तुम क्या कर रहे हो तो तुतलाती आवाज में भगत सिंह ने कहा कि "बुबुकें बो रहा हूं" यानी बंदूकें बो रहा हूं। उनका परिवार पिछली दो पीढ़ियों से विदेशी सरकार के खिलाफ संघर्ष कर रहा था। ऐसे परिवार में भगत सिंह जैसे क्रान्तिकारी विचारों वाले बालक का जन्म लेना स्वाभाविक ही था।

भगत सिंह १०-११ साल की उम्र में ही बहुत ही चिन्तनशील हो गये थे। वह धर्म के गहन विषयों की आलोचना करने में सक्षम हो गये थे। १९१९ में १३ अप्रैल को वैसाखी के दिन अमृतसर के जलियांवाले बाग में एक सभा में करीब २० हजार स्त्री-पुरुष, बच्चे इकट्ठे हुए थे। इसी बीच लैफ्टिनेंट सर ओडायर ने १०० हिन्दुतानी और ५० अंग्रेज सिपाहियों के साथ वहां प्रवेश किया। करीब १६ सौ राउन्ड फायर किये गये, जलियांवाला बाग में लाशें पट गईं। उस समय भगत सिंह १२ वर्ष के थे। वह पढ़ने गये थे, लेकिन वह दृश्य देखकर उन्होंने खून से भीगी मिट्टी उठाई और माथे से लगाकर उसे एक छोटी सी शीशी में भर लिया। घर पहुंचने पर अपनी बहन को वह शीशी दिखाई और शीशी के चारों

ओर फूल रखकर सिर झुकाया। १४ वर्ष की उम्र में ही उन्होंने पढ़ाई छोड़ दी और स्वतंत्रता के आन्दोलन में कूद पड़े। उनके अन्दर अद्‌भुत संगठन शक्ति तो थी ही, व्यवहार कुशल भी थे। इसी बीच ५ फरवरी १९२२ को गोरखपुर के चौरी चौरा स्थान पर लोगों की भीड़ ने थानेदार और सिपाहियों को थाने में बन्द करके आग लगा दी। क्रान्तिकारियों के मन में यह निश्चय हो गया कि अंग्रेजों के कान बहरे हो चुके हैं। वे शान्ति की भाषा सुन नहीं पाते। बहरों को सुनाने के लिए ऊंची आवाज की जरूरत होती है इसीलिए उन्होंने अंग्रेजों का ध्यान आकर्षित करने के लिए और उनके बहरे कानों में सुनाई देने लायक आवाज बुलंद करने का निश्चय किया। उन्होंने एसेम्बली में बम फेंकने की योजना बनाई। एसेम्बली में ८ अप्रैल १९२९ को वायसराय के फैसले की घोषणा की जाने वाली थी। भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त खाकी कमीज और नेकर पहनकर वहां पहुंच गये। उन्होंने अखबार में लिपटा हुआ बम सरकारी बेंचों के पीछे खाली जगह पर फेंक दिया। उसके बाद दूसरा बम भी फेंका। उन्होंने पिस्तौल से दो गोलियां भी छोड़ीं। दोनों वहां खड़े रहे और नारा लगाया 'इन्कलाब जिन्दाबाद' दूसरा नारा गूंजा 'साम्राज्यवाद का नाश हो'। उन्होंने एसेम्बली में पर्चे भी फेंके जिस पर अंग्रेजी में लिखा हुआ था, 'बहरों को सुनाने के लिए ऊंची आवाज की जरूरत होती है। बम फेंकने के बाद भगत सिंह तथा बटुकेश्वर दत्त आसानी से भाग कर बच सकते थे मगर वे शांत चुपचाप खड़े रहे। पुलिस जब उन्हें कोतवाली ले जाने लगी तो उन्होंने फिर नारा लगाया, "इन्कलाब जिन्दाबाद"। भगत सिंह केवल क्रान्तिकारी ही नहीं थे वे अध्ययनशील और दार्शनिक विचारों वाले व्यक्ति थे। उनसे जब न्यायालय में पूछा गया कि क्रान्ति से आपका आशय क्या है तो उन्होंने कहा, 'क्रान्ति से हमारा प्रयोजन है अन्याय पर आधारित वर्तमान व्यवस्था में परिवर्तन"। उन्होंने आगे कहा, "पूंजीपति, शोषक और समाज पर घुन की तरह जीने वाले लोग करोड़ों रुपया पानी की तरह बहाते हैं। वहीं दूसरी ओर शानदार महलों का निर्माण करने वाले लोग गन्दी बस्तियों में रहते हैं ऐसा समाज किस काम का? इसे बदलना होगा।" भगत सिंह ने न्यायालय के समक्ष नई सामाजिक व्यवस्था की जो रूपरेखा दी वह बड़े-बड़े दार्शनिकों को भी सोचने के लिए बाध्य करती है कि इतनी कम उम्र में इस व्यक्ति ने गहन चिंतन मनन का समय भला कब निकाला होगा?

असेम्बली में विस्फोट के मूल में उद्देश्य अपने क्रान्तिकारी विचारों को लोगों तक पहुंचाना था। उनके वक्तव्य उस समय के प्रचलित अखबारों में प्रकाशित हुए, उनकी नई विचार पद्धति के साथ जोशीली भाषा और कष्ट झेलने के लिए आगे बढ़ना यह देखकर सारा देश उनकेप्रति आकृष्ट हुआ। उन्होंने कहा था कि हम ये जानते हैं कि पिस्तौल और बम इन्कलाब नहीं लाते। इन्कलाब की तलवार विचारों की सान पर तेज होती है, हमने बम का धमाका करके यही प्रकट करना चाहा है। हमारे इन्कलाब का अर्थ पूंजीवाद और पूंजीवादी युद्धों के कष्टों को समाप्त करना है। उन्होंने न्यायाधीश के सामने स्पष्ट किया कि अगर बम फेंकने वालों का सही दिमाग न होता तो वे खाली जगहों की बजाय बेंचों पर बम फेंकते लेकिन उन्होंने सही जगह चुनने की जो हिम्मत दिखाई है, उसके लिए उन्हें ईनाम मिलना चाहिए। १२ जून १९२९ को हुए असेम्बली बम कांड के मुकदमे में भगत सिंह और बटुकेश्वर दत्त को आजीवन कारावास दिया गया। भगत सिंह जेल से ही अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए जनक्रान्ति करते रहे।

लम्बी भूख हड़ताल की। भगत सिंह ने कहा था कि हम इस शर्त पर भूख हड़ताल तोड़ेंगे कि हम सबको एक साथ रहने का मौका दिया जाये। जेल अधिकारियों ने उनकी बात मान ली और उन्हें फलों का रस दिया। लेकिन भगत सिंह ने कहा कि उन्हें दाल और फुल्का दिया जाये। उस समय भी उन्होंने अपनी जिद मनवाई। आजादी के इन दीवानों को देखने के लिए देश भर के लोग पेशी के दिन अदालत में जाते थे और वहां 'वन्दे मातरम' और 'इन्कलाब जिन्दाबाद' के नारों से आसमान गूंज उठता था।

लाहौर जेल में ही बटुकेश्वर दत्त, अजय घोष, जितेन्द्र सान्याल, यतीन्द्र नाथ दास भी रखे गये थे। इसी बीच सान्डर्स हत्याकाण्ड का मुकदमा भी १० जुलाई १९२९ से शुरू हुआ। भगत सिंह को हथकड़ी लगाने की जब बात हुई तो उन्होंने कहा कि एक क्रान्तिकारी को पुलिस के सिपाही के साथ हाथ बांध कर ले जाया जाये ये न्याय के खिलाफ है और उन्होंने भूख-हड़ताल कर दी। न्यायाधीश जब कुर्सी पर बैठते थे तो चारों ओर नारे और राष्ट्रीय गीत गूंजने लगता था, 'सरफरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है। देखना है

जोर कितना बाजुए कातिल में है। वक्त आने दे बता देंगे तुझे ऐ आसमां। हम अभी से क्या बतायें क्या हमारे दिल में है।"

जिस समय मृत्यु की भयानक काली छाया मंडरा रही थी, उस समय भी आजादी के इन दीवानों की हंसी और अट्टहास गूंजता रहता था। भगत सिंह कई बार ऐसा व्यंग्य छेड़ते थे या कोई ऐसा पेंचीदा सवाल उठा देते थे कि मजिस्ट्रेट भी चकरा जाते थे। मुकदमे की कार्यवाही ३ महीने तक चलती रही और दुनिया भर के मुकदमों के इतिहास में शायद लाहौर षड्यंत्र केस ही ऐसा है जिसमें फैसला उस दिन सुनाया गया जिस दिन न अभियुक्त अदालत में हाजिर थे, न गवाह और न वकील। अदालत ने खुद आरोप लगाया और खुद ही फैसला दिया। फैसले में भगत सिंह, राजगुरु और सुखदेव को फांसी की सजा सुनाई गई, ७ को कालेपानी की सजा, एक को सात वर्ष की सजा और एक को तीन वर्ष की सजा दी गई। भगत सिंह को मृत्यु से तनिक भी भय न था, उन्हें न तो व्यक्तिगत चिन्ता थी और न कोई दुःख था।

भगत सिंह जेल में अध्ययन करते रहते थे। हर पत्र में वे पुस्तकों की ही मांग करते थे। पुस्तकों के साथ-साथ वह यहां तक लिख देते थे कि पुस्तकालय के रजिस्टर में उस पुस्तक का कितना नम्बर है। उन्होंने चार्ल्स डिकेन्स, रीड मेम्सबेनी, गोर्की, मार्क्स, उमर खैयाम, आस्कर वाइल्ड, जार्ज बर्नार्ड शा और लेनिन आदि का गहन अध्ययन किया था। जब वे अपनी कोठरी में इधर से उधर घूमते थे तो कभी-कभी पुस्तकें छोड़कर मधुर स्वर में गा उठते थे, "मां मेरा रंग दे बसन्ती चोला। इसी रंग में रंग के शिवा ने मां का बंधन खोला।" उन्हें राष्ट्र और राष्ट्रवासियों की इतनी चिन्ता थी कि उसके सामने अपने कष्टों का कुछ ध्यान ही नहीं था, जेल में ही उन्होंने 'आत्मकथा', मौत के दरवाजे पर, 'समाजवाद का आदर्श' और 'स्वाधीनता की लड़ाई में पंजाब का पहला उभार' जैसी पुस्तकें लिखीं। कुछ पुस्तकें तो छप गईं लेकिन कुछ नहीं छप पाईं। जेल में जब कोई मिलने आता था तो कभी-कभी वह कहते थे अगर मैं 'इन्कलाब-जिन्दाबाद' का नारा देश के कोने-कोने तक पहुंचा सका तो समझूंगा कि मेरे जीवन का मूल्य मिल गया। उन्होंने जेल से युवकों के नाम सन्देश भेजा था जिसमें अपनी राजनीतिक विचारधारा को स्पष्ट किया था। उन्होंने अपने बारे में कहा था, **"यह बात प्रसिद्ध की गई है कि मैं आतंकवादी हूं परन्तु मैं आतंकवादी नहीं हूं, मैं एक क्रान्तिकारी हूं जिसके कुछ निश्चित विचार-आदर्श और लम्बा कार्यक्रम है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि हम बम और पिस्तौल से कोई लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। हमारा मुख्य लक्ष्य यह है कि मजदूरों और किसानों का संगठन हो।"**

भगत सिंह के बलिदान का क्षण ज्यों-ज्यों नजदीक आ रहा था, वह प्रसन्नता और उत्सुकता के साथ उस क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे। अपने छोटे भाई कुलतार सिंह को लिखे पत्र में उन्होंने कहा था "खुश रहो एहले वतन हम तो सफर करते हैं"। जब उनकी अन्तिम इच्छा पूछी गई थी तो उन्होंने कहा था—"फिर जन्म लूं और मातृभूमि की और सेवा कर सकूं।" मृत्यु के प्रति उनकी निर्भीकता को देखकर लगता था कि जैसे वह इन्सान नहीं फरिश्ता है। जब उनसे कहा गया कि आखिरी वक्त अपने 'वाहे गुरु' का नाम ले लो और 'गुरुवाणी' का पाठ कर लो तो भगत सिंह ने कहा, "अखिरी वक्त आ गया है, मैं परमात्मा को याद करूं तो वह कहेंगे कि यह बुजदिल है, तमाम उम्र तो इसने मुझे याद नहीं किया और मौत सामने नजर आने लगी है तो मुझे याद करने लगा है। लोग यही कहेंगे कि आखिरी वक्त मौत को सामने देखकर इसके पांव लड़खड़ाने लगे।" जब फांसी की सजा दी गई तो भगत सिंह बीच में थे, अगल-बगल सुखदेव और राजगुरु थे। तीनों मिलकर साथ-साथ गाते हुए चलने लगे, 'दिल से निकलेगी ना मर कर भी वतन की उल्फत, मेरी मिट्टी से भी खुशबुए-वतन आयेगी।'

भगत सिंह ने मजिस्ट्रेट को देखकर कहा था 'आप बहुत भाग्यशाली हैं कि आपको यह देखने को नसीब हो रहा है कि भारत के क्रान्तिकारी किस तरह खुशी-खुशी अपने उच्च आदर्शों के लिए मौत को गले लगाते हैं।' उनके पैरों पर न कंपकंपी थी, न चेहरे पर घबराहट। फांसी का फंदा पकड़कर उसे चूम कर तीनों ने एक साथ गर्जना की, "इन्कलाब-जिन्दाबाद' 'साम्राज्यवाद मुर्दाबाद'। उस समय शाम के सात बजकर ३० मिनट थे। इन तीनों क्रान्तिकारियों को समूचा देश उनकी निर्भीकता और राष्ट्रवाद की अदम्य भावना के लिए सदैव याद रखेगा।

**बी-८३, पंडारा रोड, नई दिल्ली-३**

गत माह जिनकी पचासवीं पुण्यतिथि थी

# डॉ० बालकृष्ण शिवराम मुंजे

सांसारिक मोह-माया से ग्रसित गलितगात्र भारत को युद्धाय कृतनिश्चय का महान् उपदेश कुरुक्षेत्र की रणस्थली पर देने वाले योगीश्वर श्रीकृष्ण को, लंकापति रावण पर आक्रमण कर आसुरी प्रवृत्ति का विनाश करने वाले श्रीराम को समझने की दृष्टि जिसने पायी ऐसे एक वीरव्रतधारी डॉ० बालकृष्ण शिवराम मुंजे का जन्म १२ दिसम्बर १७८१ को मध्य प्रदेश के बिलासपुर में हुआ था। अपने पिताश्री से प्राप्त संस्कारों के कारण ही पाश्चात्य पद्धति की शिक्षा पाने के उपरान्त भी बालकृष्ण प्रखर हिन्दू धर्माभिमानी के रूप में ख्यात रहा। १८९४ से १८९८ की कालावधि में मुम्बई के ग्रान्ट मेडिकल कालेज में जब वह डॉक्टरी की शिक्षा प्राप्त कर रहा था तब महान क्रान्तिकारी चाफेकर बन्धुओं की राष्ट्रभक्ति एवं हौतात्म्य से बहुत प्रभावित हुआ। १८९९ में रायगढ़ के किले पर लोकमान्य तिलक के दर्शन और सान्निध्य प्राप्त होने पर डॉ० मुंजे ने तिलकजी का शिष्यत्व ग्रहण किया। दक्षिण अफ्रीका के बोअर युद्ध का अवसर पाकर डॉक्टर मुंजे सेना में भर्ती हो गये। युद्ध अनुभव प्राप्त कर वापस स्वदेश लौटने पर सीधे घर जाकर अपना डॉक्टरी का व्यवसाय न जमाते हुए भारत परिक्रमा पर निकल पड़े। इसी देशाटन में जब वे पेशावर में थे तो एक आश्चर्यमयी संयोग से उनकी भेंट जम्मू-काश्मीर नरेश महाराजा प्रतापसिंह से हुई।

## महाराजा काश्मीर से भेंट

डॉ० बालकृष्ण शि० मुंजे से हुए वार्तालाप में महाराजा प्रतापसिंह बोले "आज (सन् १९००) से लगभग पचास वर्ष पूर्व का प्रसंग है। तब मेरे प्रपिता (महाराज गुलाब सिंह) जम्मू-काश्मीर के सिंहासन पर विराजमान थे। तब राज्य के समस्त मुसलमानों ने अपना एक शिष्टमण्डल महाराजा के दरबार में भेजकर लिखित में निवेदन किया था। निवेदन पत्र में विनय थी कि हम सब मुसलमान इस्लाम मजहब का परित्याग कर हिन्दू धर्म अपनाना चाहते हैं और अपनी जाति के होकर रहना चाहते हैं। इसीलिए कि अतीत में हमें बलपूर्वक धर्मान्तरित किया गया था। अतः हमारी शुद्धि कर हमें हमारी मूल जाति में स्वीकार करने की कृपा करें। मूलतः हम हिन्दू ही थे। विगत दो सौ वर्षों में काश्मीर के अफगान सत्ताधारियों ने हमारे पूर्वजों को उनकी इच्छा के विरुद्ध बलात् मुसलमान बनाया है। काश्मीर पर राज्य करने वाले आप हमारे महाराजा हिन्दू हैं। अतः कृपा कर हमें हमारे मूल के हिन्दू धर्म में स्वीकार कर अपनी जाति में सुखपूर्वक जीने की अनुज्ञा दीजिए। आपकी जो भी आज्ञा हो वैसा प्रयश्चित कर हम हिन्दू होने को तैयार हैं।" डॉ० मुंजे बड़े धैर्य से महाराज प्रतापसिंह को सुन रहे थे। उनकी आंखों में जिज्ञासा स्पष्ट झलक रही थी। ऐसे में वे अपने आपको रोक न सके और उन्होंने पूछा फिर क्या हुआ? महाराज ने कहा कि अपने प्रजाजन की ऐसी स्वरस्फूर्त भावना को देखकर महाराज गुलाब सिंह बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने अविलम्ब ही राज्य के शास्त्री पंडितों की सभा आयोजित कर राज्य के मुस्लिम समाज का उक्त निवेदन पत्र सभा के सम्मुख रखा। फिर अड़ियल शास्त्री-पंडितों ने नकारा करते हुए बताया कि धर्मशास्त्र में इस प्रकार का कोई प्रावधान नहीं है। महाराज ने विद्वत सभा को सचेत किया कि इस प्रकार का अवसर पुनः हाथ न लगेगा। इस अनायास प्राप्त अवसर को ईश्वर की आज्ञा मानते हुए हमने इन्हें हिन्दू बनाने का निश्चय किया है। अतः इन्हें विधिपूर्वक या नवीन विधि की रचना कर सम्पन्न करेंगे। पर वे शास्त्री-पंडित टस से मस न हुए। दृढ़निश्चयी महाराजा ने घोषणा की कि मूलतः हिन्दू रहे और पुनः हिन्दू होने की कामना रखने वाले प्रजाजनों को मैं अपने नरेश होने के अधिकार के नाते एक विराट यज्ञ का आयोजन कर हिन्दू धर्म में अवश्य ही दीक्षित करूंगा। शास्त्री-पंडित महाराज के विरोध पर उतर आये। उन्होंने आत्महत्या कर लेने की धमकी दी। महाराजा गुलाबसिंह ब्रह्महत्या के पाप की भावना से विचलित हुए और पंडितों को दण्डवत कर शुद्धिकरण की राजाज्ञा वापस ले ली।

## हिन्दू संगठन का व्रत

डॉक्टर मुंजे का मन विक्षोभ से भर गया। पेशावर से कलकत्ता की यात्रा में काश्मीर के पुरोहित-पंडितों की

मूर्ख आत्मघाती हठवादिता उनको सालती रही। मन ही मन उन्होंने राष्ट्र जागरण में उद्यत होने का संकल्प किया। परन्तु जीविका को दृष्टिगत रख नागपुर में नेत्र चिकित्सक का व्यवसाय आरम्भ किया। १९०४ में डॉ० मुंजे कांग्रेस के मुम्बई अधिवेशन में उपस्थित रहे और अगले ही वर्ष १९०५ में वाराणसी अधिवेशन में नागपुर प्रतिनिधि के रूप में सम्मिलित हुए। डॉ० मुंजे की हिन्दुनिष्ठा इतनी दृढ़ थी कि १९१६ में लोकमान्य तिलक ने हिन्दू-मुस्लिम एकता की भावना से जो लखनऊ समझौता किया तो उनके शिष्य होते हुए भी डॉ० मुंजे ने उसका स्पष्ट शब्दों में विरोध किया। अगस्त १९२३ में डॉ० मुंजे ने नागपुर में हिन्दू महासभा शाखा की स्थापना की। इसके पूर्व मई १९२३ में डॉ० मुंजे मोपला विद्रोह से पीड़ित हिन्दुओं की स्थिति देखने और उन्हें ढाढस बंधाने २० दिन तक मलाबार में रह आये थे। वहां के बलात धर्म परिवर्तन को शुद्धि के द्वारा विफल करने के लिए उन्होंने सनातनी शास्त्र-पंडितों से चर्चा-विवाद किये और शुद्धि आन्दोलन में डट गये। इसी वर्ष नागपुर में मुस्लिम दुराग्रह के विरुद्ध धार्मिक दिण्डी सत्याग्रह का नेतृत्व किया। मुस्लिमों की दंगाई का मुंहतोड़ जवाब देने के लिए हिन्दू महासभा का स्वयंसेवक संगठन बनाया। इसी अस्थायी स्वयं सेवक संगठन से १९२५ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ आरम्भ करने की प्रेरणा डॉ० मुंजे और उनके मित्रों-अनुयायियों को प्राप्त हुई। हिन्दू संगठन का कार्य करते हुए भी वे कांग्रेस में सक्रिय थे। १९२० के नागपुर कांग्रेस अधिवेशन की स्वागत समिति के वे महामन्त्री थे। वस्तुतः नागपुर अधिवेशन की अध्यक्षता लोकमान्य तिलक को करनी थी। परन्तु उनके आकस्मिक देहावसान से कांग्रेस के गरम दल के सम्मुख विपदा सी आ पड़ी तब डॉ० मुंजे ने महर्षि अरविन्द से कांग्रेस की अध्यक्षता स्वीकारने का आग्रह करते हुए पत्राचार किया और स्वयं पाण्डीचेरी भी गये। पर महर्षि अरविन्द तैयार नहीं हुए। १९२७ के हिन्दू महासभा अधिवेशन पटना के वे अध्यक्ष चुने गये। अनुभवों के आधार पर उन्हें यह विश्वास हो गया था कि भारत की स्वतंत्रता को अब टाला नहीं जा सकता। पर स्वतंत्रता प्राप्ति के अनन्तर देश के सम्मुख आत्मरक्षा का विशेष कर भारत के मुसलमानों की विघटनवादिता के कारण उनकेसंभावित विद्रोह-आक्रमण से देश की सुरक्षा का चिन्तन उनके मस्तिष्क में था। इसी भावना से अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने सेना के हिन्दुकरण की घोषणा की। हिन्दुओं में क्षात्रभाव का निर्माण करने और उन्हें सैनिकी प्रशिक्षण देने के संकल्प से उन्होंने नासिक में भोसला सैनिकी विद्यालय की स्थापना की। डॉ० मुंजे के विलक्षण व्यक्तित्व की कल्पना ही की जा सकती है कि देश पर साम्राज्यवादी अंग्रेजों का शासन होते हुए भी १९३५ में सेन्ट्रल हिन्दू मिलिट्री एज्यूकेशन सोसायटी की स्थापना की और इसी से हि०मि०ए०सो० के तत्त्वावधान में १९३७ की श्री रामनवमी के पावन दिवस पर भोंसला मिलिट्री स्कूल का भूमिपूजन कर देश का एकमेवाद्वितीय अशासकीय हिन्दू सैनिकी प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की।

## राजनीति में विशिष्ट स्थान

भारतीय स्वतंत्रता संघर्ष में अन्तिम दो दशकों का अपना विशेष महत्त्व है। इसी कालखंड में १९३१ की राउण्ड टेबल कान्फ्रेंस (इंग्लैंड) में हिन्दू महासभा के डॉ० मुंजे ने जिन्ना की विघटनवादी नीति और प्रवृत्ति का सक्षमता के साथ तार्किक विरोध किया। तथाकथित सात करोड़ अछूतों के लिए पृथक निर्वाचन की मांग पर १९३२ में डॉ० अम्बेडकर जब अडिग रहे और गांधीजी ने आमरण अनशन किया तो इस संकट के समाधान में डॉ० मुंजे का योगदान इतिहास में अपना महत्त्व रखता है। डॉ० मुंजे ने अपने जीवन में बहुविध कार्य और संगठन आरम्भ किये जिनकी धरा में इस देश और हिन्दू की रक्षा और उन्नति का भाव निहित था। स्पष्टतः भारत को अखण्ड बनाये रखने में हिन्दू महासभा का यह नेता अपनी समस्त क्षमता से लगा रहा। परन्तु अन्ततोगत्वा देश का विभाजन रोका नहीं जा सका। उस अवस्था में खंडित भारत की सुरक्षा का महत्त्व कुछ बढ़ ही गया था। तब डॉ० मुंजे के सेना के हिन्दूकरण का महत्त्व उभर कर देश के सामने आया। कर्मयोगी डॉ० मुंजे अपने राष्ट्रनिर्माण कार्य में रत रहे और पचास वर्ष पूर्व ४ मार्च १९४८ को ७७ वर्ष की अवस्था में उनका देहावसान हो गया। ५ मार्च को तत्कालीन हिन्दी पार्लियामेंट में सदस्यों ने एक मिनट का मौन रखकर इस महान स्वाधीनता सेनानी को श्रद्धांजलि अर्पित की। डॉ० बालकृष्ण शिवराम मुंजे आज हमारे मध्य नहीं, तथापि सेन्ट्रल हिन्दू मिलिट्री एज्यूकेशन सोसायटी का भोंसला मिलिट्री स्कूल जैसा उनका जीवंत स्मारक आज खड़ा है और विकसित होता रहा है। नासिक के अतिरिक्त नागपुर की शाखा सुयोग्य युवाओं को सैनिकी प्रशिक्षण देकर भारत की प्रतिरक्षा को दृढ़ और बलशाली बनाने के अपने दायित्व में जुटी हुई है। **(हिन्दू समवेत)**

१ मई जिनकी जन्मतिथि है

# भाल जी पेंढारकर

❑ अरविन्द जैन

कोल्हापुर में १ मई १८९९ को जन्मे थे भालजी पेंढारकर। एक डॉक्टर पिता के पुत्र होकर भी वे मैट्रिक से आगे नहीं पढ़ पाए। आगे चलकर स्वाभिमान, स्वधर्म और स्वदेश का महामंत्र अपने जीवन में उतारने वाले भालजी का बचपन एक अल्हड़, गैरजिम्मेदार, घुमक्कड़ और लापरवाह बिगड़े हुए बच्चे जैसा रहा। चौदह वर्ष की आयु में वे परिवारजनों से लड़-भिड़कर घर से भाग निकले और पुणे के एक सिनेमाघर में गेटकीपर बन गए। यही था सिनेमा से उनका पहला परिचय। फिर वे सेना में भर्ती हो गए। ब्रिटिश फौज में काम करते-करते उन्हें लगा कि क्यों न अपने देश को स्वाधीन कराने की जंग छेड़ी जाए। वे क्रान्तिकारी दल में शामिल हो गए और अमर शहीद राजगुरु के निकटतम साथी बन गए। **वीर सावरकर को उन्होंने अपना प्रेरक और आदर्श मान लिया तथा देश, देव और धर्म की सेवा को अपना जीवन लक्ष्य बना लिया।**

प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान ब्रिटिश सेना में दो वर्ष तक रहने के पश्चात भालजी वापस पुणे लौटे और वहां अपोली तथा लक्ष्मी नामक सिनेमाघरों के सहायक मैनेजर के रूप में काम करने लगे। लोकमान्य तिलक के अखबार 'केसरी' में कुछ समय काम करने के कारण उनकी लेखन शैली अत्यन्त रोचक एवं प्रभावशाली हो गई। अपने इन्हीं गुणों के कारण भालजी मूक फिल्मों के निर्माताओं द्वारा फिल्म की कहानी के 'टाइटल्स' लिखने के लिए आमंत्रित किए जाने लगे। फिर धीरे-धीरे उन्हें मराठी फिल्मों की कहानी और पटकथा लिखने के लिए भी अनुबंधित किया जाने लगा।

बाबूराव पेण्टर ने उन्हें अपनी फिल्म 'मार्कण्डेय' (१९२२) की पटकथा लिखने के लिए बुलवाया, परन्तु दुर्भाग्य से स्टूडियो में आग लग गई और फिल्म की योजना धरी रह गई। रजतपट से भालजी का रिश्ता जुड़ तो गया था परन्तु उनका लगाव रंगमंच से ही ज्यादा था। उन्हीं दिनों अपने एक नाटक 'चलती दुनिया' के कारण वे खूब चर्चित हो गए थे। इसके बाद उन्होंने अपने प्रिय विषय पर 'क्रान्तिकारी' नाम से एक नाटक की रचना की। कोल्हापुर विद्यापीठ में मंचित हुए इस नाटक में भालजी ने अपने दोनों भाइयों-बाबूराव तथा मास्टर विट्ठल पेंढारकर के साथ अभिनय भी किया। नाटक बेहद सफल रहा।

इस उपलब्धि के पश्चात् भालजी पेंढारकर कुछ समय के लिए मुम्बई चले आए और यहां उन्होंने फिल्म 'वन्देमातरम्' का निर्माण किया। राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत यह फिल्म सन् १९२७ में बनाई गई थी, परन्तु सेंसर की कोपदृष्टि इस फिल्म पर पड़ गई। उत्तेजित होकर ब्रिटिश सरकार ने भालजी को जेल में डाल दिया और फिल्म में ढेर सारी काटछांट कर दी। इसका परिणाम यह हुआ कि कुछ साल बाद जब यह फिल्म प्रदर्शित की गई तो असफल हो गई। हताश भालजी एक बार फिर कोल्हापुर लौट आए और 'बाजबहादुर' के लेखक निर्देशक का काम करने लगे। इससे पूर्व १९२४-२५ में अशोक पिक्चर्स की भव्य ऐतिहासिक फिल्म 'पृथ्वीवल्लभ' की कथा-पटकथा भी भालजी ने लिखी और फिल्म के खलनायक की भूमिका भी निभाई। मणिलाल जोशी निर्देशित यह फिल्म बेहद सफल हुई थी।

सवाक् सिनेमा का युग आरम्भ होने पर भालजी को लगा कि अब उन्हें अभिव्यक्ति का उचित एवं प्रभावशाली माध्यम मिल गया है। सन् १९३२ में दादा तोरणे की निर्माण संस्था 'सरस्वती सिनेटोन' की 'श्यामसुन्दर' का निर्देशन तो भालजी ने कुशलतापूर्वक किया ही, इसके पटकथा, संवाद एवं गीत भी उन्होंने ही लिखे। भगवान कृष्ण के बाल्यकाल पर बनी इस फिल्म ने अपार सफलता पाई और मुम्बई में लगातार २७ हफ्ते चलकर इसने रजत जयन्ती मनाने वाली देश की पहली फिल्म होने का सम्मान पाया। भारतीय फिल्म जगत् को शाहू मोडक और शान्ता आप्टे जैसे कलाकारों से परिचित करवाने का अप्रत्यक्ष श्रेय भी भालजी पेंढारकर को ही था।

'श्यामसुन्दर' की कामयाबी के बाद भालजी धार्मिक फिल्मों के लेखक-निर्देशक के रूप में स्थापित हो गए। सन् १९३२ से १९३७ के मध्य उनके द्वारा लिखित धार्मिक फिल्में रहीं— सैरन्ध्री, 'आकाशवाणी, 'कालिया मर्दन' तथा 'सावित्री'।

सन् १९३२ में ही आई एक मराठी फिल्म 'स्वराजचा सीमोवर' जिसके चरित्र नायक थे, भालजी के आदर्श नायक शिवाजी। इस फिल्म की कथा-पटकथा एवं गीत भालजी पेंढारकर ने लिखे थे। इस फिल्म के दो वर्ष बाद 'नेताजी पालकर' (सवाक्) आई, जो शिवाजी के एक विश्वस्त सेनापति को केन्द्र बनाकर चित्रित की गई थी। इसके बाद तो भालजी ने शिवाजी के जीवन से जुड़ी घटनाओं पर फिल्मों की जैसे श्रृंखला ही प्रस्तुत कर दी। मराठी सिनेमा के साथ-साथ अब भालजी हिन्दी फिल्मों के निर्माता और लेखक के रूप में भी प्रतिष्ठित होने लगे थे।

१९४३ में भालजी ने अपनी खुद की निर्माण संस्था 'प्रभाकर पिक्चर्स' की स्थापना की। स्मृति शेष के रूप में कोल्हापुर का जयप्रभा स्टूडियो आज भी विद्यमान है, जहां फिल्मों की शूटिंग की जाती है।

*(शेष पृष्ठ ६ पर)*

# पं० इन्द्रराज जी : व्यक्तित्व एवं कृतित्व

❑ स्वराज्य चन्द्र

शान्त, सौम्य सरल एवं मृदु स्वभाव की गंगा हृदय में संजोये पाषाण सदृश निश्चय एवं कर्मठता की प्रतिमूर्ति और सादा जीवन तथा उच्च विचार की उक्ति को पूर्णरूपेण चरितार्थ करने वाले महान् व्यक्तित्व का नाम था इन्द्रराज। अथक परिश्रमशील, निरन्तर गतिशील, वैदिक विचारधारा का घर, परिवार, समाज एवं राष्ट्र जीवन में प्रचार करने वाले निष्काम कर्म करने वाले व्यक्ति का नाम ही था इन्द्रराज।

देश विभाजन की विभीषिका को सहन करते हुए आर्य जगत् के महान संन्यासी पूज्य स्वामी आत्मानन्द की प्रेरणा एवं संस्कारों से ओत-प्रोत निजी जीवन के दुर्गम स्थल को पार करते, परिवार के प्रति सम्यक दायित्व का निर्वाह करते हुए स्वयं को समाज-सेवा के प्रति समर्पित कर, आर्य समाज को अपना कर्म-क्षेत्र चुना तथा वैदिक धर्म के माध्यम से 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' को लक्ष्य बनाकर परिवारों को सुसंस्कारित करने का बीड़ा आपने उठाया। अपनी धुन के धनी एवं सामाजिक क्षेत्र में कार्य करने की लगन के दीवाने श्री इन्द्रराज रात-दिन परिवारों में संस्कारों के माध्यम से लगभग एक लाख रुपया प्रतिवर्ष एकत्रित कर समाज सेवा के लिए अर्पित कर देते थे। इतनी विशाल राशि में से किंचित मात्र भी अपने वैयक्तिक प्रयोग में नहीं लाते थे अपितु समाज सेवा से बचे अतिरिक्त समय में अपने व्यवसाय से जो कुछ भी प्राप्त करते थे उसमें से भी आवश्यकता पड़ने पर समाज को भेंट करते रहते थे।

आपके संस्कारों से लाखों परिवार लाभान्वित हुए हैं। अनेक उजड़े परिवार बसे। परिवारों में सुख, शान्ति एवं प्रेम का वातावरण बना। अनेक युवकों को कर्त्तव्य बोध हुआ, माता-पिता के कष्टों का निराकरण हुआ। दहेज के अभिशाप से त्रस्त परिवारों को अपनी बहन-बेटियों के लिए नये-नये मार्ग प्रशस्त हुए। समाज में दान प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिला, इसके अतिरिक्त और न जाने कितने सुसंस्कारों ने समाज को लाभान्वित किया। दीन-दुखियों की सहायता करना, बाल्मीकियों के उत्थान, उनमें हिन्दुत्व के प्रति गर्व एवं गौरव की भावना को पैदा करना, छुआछूत के कलंकों को दूर करने में अनवरत प्रयत्नशील रहना, अन्तर्जातीय विवाहों को प्रोत्साहन देना एवं छोटे बड़े का भेदभाव मिटाना तथा आधुनिक चमक-दमक के युग में अनेक नव-युवकों तथा नवयुवतियों को संस्कारों के माध्यम से पथभ्रष्ट होने, विधर्मी होने और आत्महत्या जैसे घिनौने अपराधों से बचाने में श्री इन्द्रराज जी का महान् योगदान रहा है। मात्र संस्कार कराना ही आपके जीवन का लक्ष्य नहीं था अपितु जब कभी भी आपने देश पर आपत्ति के बादल मंडराते देखे, आप भारतीय संस्कृति की रक्षा के लिये मैदान में कूद पड़े। चीन एवं पाकिस्तान के युद्ध के समय, देश में बाढ़-भूकम्प तथा अन्य दैवी प्रकोप के समय आर्यसमाज के माध्यम से विपुल धनराशि जन-जन परिवारों एवं समाज से एकत्रित कर राष्ट्र को अर्पित कर दी। इतना ही नहीं हिन्दी आन्दोलन, गोरक्षा आन्दोलन में भी अपने दायित्व का पूर्ण रूपेण निर्वाह किया तथा जन-जागरण के आन्दोलन को प्रभावी बनाया और स्वयं को कारागारवास के लिए प्रस्तुत कर दिया। स्वतंत्रता से पूर्व जन-जागरण हेतु की गई रचना के कारण आपको ४० दिन का कठोर कारावास का दण्ड भी भोगना पड़ा।

आप कहने की अपेक्षा करने, दूसरों से कार्य कराने की अपेक्षा पहले स्वयं करके उदाहरण प्रस्तुत करने में अधिक विश्वास रखते थे। आपका जीवन-दर्शन पर उपदेश कुशल बहुतेरे उक्ति का विरोधी था। आपका व्यक्तित्व रचनात्मक था, मात्र दिखावा नहीं, वरन् प्रयोगात्मक था।

गुरुकुल प्रभात आश्रम भोलाझाल के रचनात्मक कार्य का एक उत्कृष्ट प्रमाण है। जहां आपकी प्रेरणा से लगभग ८० ब्रह्मचारी महान् तपस्वी, पूज्य संन्यासी स्वामी विवेकानन्द जी के आचार्यत्व में श्री पं० बुद्धदेव विद्यालंकार द्वारा स्थापित इस महान् संस्था में वैदिक धर्म की शिक्षा ग्रहण कर रहे हैं। जिसका समस्त भोजन,

निवास, वस्त्र एवं शिक्षा के दायित्व का निर्वाह आपके ही अथक परिश्रम के परिणाम स्वरूप सम्भव हो रहा था। आपके निःस्वार्थ कार्यों से प्रेरणा प्राप्त कर दान-दाताओं का उत्साह देखकर अनायास मुंह से निकल पड़ता है कि दान देने वालों की कमी नहीं है।

श्री इन्द्रराज जी के इतने व्यस्त जीवन में जब इनकी कृतियों पर दृष्टिपात करते हैं तो अत्यन्त आश्चर्य होता है। आपके द्वारा प्रचुर मात्रा में वैदिक साहित्य लिखा गया है जिसमें १ दर्जन से ऊपर कृतियों की लाखों प्रतियां समाज को लाभान्वित कर रही हैं। आपकी कृतियों में दैनिक यज्ञ, वैदिक उपासना, पं० द्विजेन्द्र नाथ लेखमाला, अग्निहोत्रम् यज्ञ-पर्व सुधा, वैदिक अग्नि प्रकाश, पं० बुद्धदेव जी के जेल में दिये गये व्याख्यानों का संकलन, मद्य-निषेध, स्वामी श्रद्धानन्द आदि हैं।

इसके अतिरिक्त अनेक पत्र-पत्रिकाओं में आपके शताधिक लेख प्रकाशित हुए हैं। श्री इन्द्रराज जी निःसन्देह वैदिक धर्म के प्रहरी, महर्षि स्वामी दयानन्द के सन्देशवाहक, आर्यसमाज के कर्मठ नेता, लेखक एवं समाज के लिए अनुकरणीय प्रतिभाशाली व्यक्तित्व थे। ऐसा व्यक्तित्व, राष्ट्र, समाज और समय की आवश्यकता थी। ऐसे ही निःस्वार्थ स्वयं-सेवी व्यक्तियों के आधार पर यह देश उत्तरोत्तर उन्नति के पथ पर अग्रसर है। ❑

# वेद प्रचार में प्राप्त सहयोग

**१०१ रु० दान देने वाले**

**सर्वश्री :-** राधे लाल चावल वाले-आगरा। शशीभूषण-देवरिया, रमेशचन्द्र वर्मा-बहादुरगढ़, सत्यपाल घई-दिल्ली। वेद कुमारी-दिल्ली। गजानन्द-दिल्ली। हरिओम-फैजाबाद। प्रदीप शर्मा-मोदीनगर। सुशील कुकरेजा-दिल्ली। सुमित्रा-दिल्ली।

**१०० रु० दान देने वाले**

**सर्वश्री :-** हरवंश लाल आर्य-लखनऊ। सी० पी० शर्मा-गोरखपुर। गोपीलाल गुप्ता-अलीगढ़। वी० ए० मिश्रा-मुम्बई। भगवान् दास अग्रवाल-तिनसूकिया। धर्मवीर गुलाटी-मुम्बई। वेद प्रकाश आर्य-मुक्तसर। उत्तमचन्द्र हंसरानी-भोपाल। उमराव सिंह कृषि अधिकारी-अलवर। एम० पी० अग्रवाल-मुम्बई। जयकिशन धीमान-पंचकुला। मोहन लाल-अम्बाला। कासीराम पवन कुमार-हरिद्वार। आर्य समाज दीन दयाल-वाराणसी। डॉ० रामफल-सिरसा। अंगूरी देवी-पानीपत। तेजपाल जी-पाली। डी० एस० यू० एस० कम्पलेक्स-दिल्ली। मंत्री आर्य समाज। डॉ० सुशान्त कुमार शास्त्री। भगवान सिंह-बीकानेर। राष्ट्रीय स्टोर-दिल्ली। वीना अरोड़ा-दिल्ली। राकेश भार्गव-नई दिल्ली।

**५१ रु० देने वाले**

**सर्वश्री :-** हरीशचन्द्र वर्मा-वीरभूमि। रामभरोसे आर्य-रायसेन। परमलाल गुप्ता-बहराइच। सन्तराम आर्य-बाराबंकी। चरनसिंह-मेरठ। रामचरित गुप्त-गोरखपुर। किशन गोयल-मुरोहिला। वी० डी० एल०-मुम्बई। परमात्मा प्रसाद मिश्रा-मुम्बई। स्वामी राम स्वरूप योगाचार्य-कांगड़ा। जगदीश प्रसाद सिन्हा-चन्द्रपुर। रामप्रकाश-दिल्ली। सुशील वर्मानी-दिल्ली। सुरेन्द्र गुप्ता-दिल्ली। ओमप्रकाश-मेरठ। चौ० हीरा सिंह-मुखमेलपुर। बलजीत सिंह मान-हिरनकी। शोभा महेन्द्रू-दिल्ली। राममुनि वानप्रस्थ-कछेला। मंजु भार्गव-दिल्ली।

**५० रु० देने वाले**

**सर्वश्री :-** आर० सी० गर्ग-वास्कोडिगामा गोवा। वीर सिंह असवाल-कलकत्ता। विद्यासागर दीक्षित-हस्तिनापुर मेरठ। दलपत-नाप्रेल। हीरालाल सर्राफ-मेरठ। रुद्रनाथ सिंह प्रधान-बस्ती। स्व० कौशल्या देवी-मुजफ्फरनगर। उदय ब्रसलेम-उड़ीसा। डी० आर० पुनियानी-दिल्ली। दमयन्ती शर्मा-दिल्ली। रमेशचन्द्र-दिल्ली। डॉ० आनन्द-दिल्ली। उर्मिला कपूर-दिल्ली।

# भारत की अखंडता पर मडराते खतरे (१)

❑ ज्योतीन्द्र नाथ दीक्षित

**श्री दीक्षित पूर्व विदेश सचिव भारत सरकार हैं। वह पाकिस्तान व श्रीलंका में भारत के उच्चायुक्त भी रहे हैं। उनका मत है कि भारत को तोड़ने के काम में पश्चिमी शक्तियों के अलावा हमारे पाकिस्तान जैसे पड़ोसी खास तौर पर जुटे हुए हैं। इस लेख में प्रस्तुत है उन खतरों का उल्लेख और साथ ही उनसे निपटने के लिए अभीष्ट उपायों की भी चर्चा है।**

प्रश्न उठता है कि क्या हमारी सामाजिक व भौगोलिक अखंडता वर्तमान समय में पूर्ण सुरक्षित है या उस पर भी खतरे मंडरा रहे हैं? मुझे लगता है इस समय सबसे बड़ा खतरा है सेकुलरवाद की गलत और संकीर्ण व्याख्या से। यह सेकुलरवाद एक प्रकार से बहुसंख्यकविरोधी रवैए का नाम हो गया है। जबकि यहां बहुसंख्यकों के कारण ही हजारों वर्षों से दुनिया का हर शरणार्थी बसता आया है। हमने तो उनसे यह भी नहीं कहा कि यहां रहना है तो अपना धर्म बदलो या रहने का ढंग बदलो। संसार में कोई ऐसा देश नहीं है, जिसके इतिहास में यह हुआ हो। इसलिए हमें सेकुलरवाद सिखाने की जरूरत नहीं। सेकुलरवाद भारत में केन्द्रीभूत शक्तियों को पैदा करने का उपकरण नहीं बनना चाहिए। पर दुर्भाग्य से यही किया गया है। क्योंकि यहां बहुसंख्यक हमेशा रक्षात्मक रहे हैं और अल्पसंख्यक प्रायः अत्यन्त ऊंची मांगे करने वाले रहे हैं। जबकि दोनों का सहयोग पूर्ण समन्वय होना चाहिए था और यह कहना चाहिए था कि यह हमारा देश है, जहां संसार के ११ प्रमुख मतों, पंथों के लोग बसते हैं। यहां सबकेसाथ ही मिलजुल कर रहना है। ऐसी स्थिति पैदा नहीं करनी कि बहुसंख्यक ही ठिठक जाएं या उन्हें बाकी से अपनी रक्षा करने की जरूरत महसूस होने लगे। पिछले ५० वर्षों में बहुसंख्यक अनावश्यक रूप से रक्षात्मक रहे हैं। ऐसा नहीं होना चाहिए। उनके रक्षात्मक होने से फिर दूसरे लोग समझने लगते हैं कि बहुसंख्यकों की सदाशयता और ईमानदारी उनके दिए गए प्रमाण पत्रों पर निर्भर है, जैसे बनातवाला ने कह दिया था।

उदाहरण के लिए बहुसंख्यकों के लिए एक बड़ा मुद्दा है गोरक्षा का। इसे हिन्दुओं का मुद्दा बताकर जब बाकी इसका विरोध करते हैं तो मान लिया जाता है कि वे पक्के सेकुलवादी हैं। मैं तो गोरक्षा का प्रश्न देश की आर्थिक स्थिति से जुड़ा हुआ मानता हूं। हिन्दुओं की आलोचना का मुद्दा अगर कोई हो सकता है तो वह मात्र इतना ही है कि गोरक्षा-गोरक्षा चिल्लाने के बावजूद वे सचमुच में गोरक्षा करते नहीं। पर यह कहना गलत है कि गोरक्षा की बात उठाना दकियानूसीपन है। इस प्रश्न पर हिन्दुओं को रक्षात्मक होने की जरूरत नहीं है। जिन बातों में उनका विश्वास है, उन्हें निर्भीकता से कह देना चाहिए।

दूसरा खतरा है इस्लामी पाकिस्तान और पश्चिमी देशों द्वारा भारत को तोड़ने की साजिशों का। "सभ्यताओं का संघर्ष" पर एक अमरीकी विश्लेषक हेटिंगटन की अवधारणा बहुचर्चित रही है। उनका कहना है कि एक ओर सारे इस्लामी देश होंगे, दूसरी ओर सारे ईसाई देश। चीन इस्लामी देशों का साथ देगा। हिन्दुस्थान ही अकेला देश बचेगा, जिसकी कोई मदद नहीं करेगा। लेकिन हिन्दुस्थान एक बड़ा देश है। ९०-९५ करोड़ लोग और सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संभावनाओं से भरा।

अब एशिया के सामने पश्चिम खड़ा है। रूस आधा एशियाई देश है। चीन एक महाशक्ति है। जापान एक औद्योगिक शक्ति है और भारत एक सामर्थ्य की संभावनाओं से भरा देश है। पश्चिम सोचता है कि एशिया के चार देश ही ऐसे हैं जिनसे उसका मुकाबला हो सकता है। इन चारों देशों से पश्चिम को खतरा है और उनमें हिन्दुस्थान सबसे ज्यादा कमजोर है। तो कोशिश ये करनी चाहिए कि इन देशों को आगे न बढ़ने दिया जाए और उनको तोड़ा जाए। देखते ही देखते उन्होंने सोवियत संघ तोड़ ही डाला। इसका चाहे कोई भी कारण, कोई भी व्याख्या दें आदि-आदि। केवल यथार्थ ही बयान कर रहा हूं। पर सच्चाई तो यह है कि एक

महाशक्ति को पश्चिम ने तोड़ डाला। यह कहने का अर्थ यह नहीं है कि मैं कम्युनिज्म का समर्थक हूं। सोवियत संघ के बाद अगला निशाना भारत ही है। हम आर्थिक दृष्टि से दुर्बल हैं, सामाजिक दृष्टि से भी हमारे समाज में अनेक गम्भीर मतभेद हैं। हमारी फौजी ताकत भी कम है। इसलिए बाकी तीन देशों की तुलना में भारत ही सबसे नरम निशाना है, जिसको तोड़ना सरल है।

इस दिशा में ही पश्चिम के चिंतक आर्थिक विश्लेपक काम कर रहे हैं। हेटिंगटन की अवधारण भी इसी दिशा में छोड़ा गया तीर है। उसकी अवधारणा के अनुसार, जिन देशों में भी बड़ी संख्या में मुसलमान रह रहे हैं वे विश्वव्यापी मुस्लिम बनाम, गैर मुस्लिम संघर्ष की स्थिति में मुसलमानों के साथ झुकेंगे और इस प्रकार वे जिस देश के निवासी होंगे, उस देश में उथल-पुथल मचाएंगे, यदि उस देश की सरकार ने मुसलमानों का साथ नहीं दिया तो वैसी स्थिति में पश्चिम को वह देश तोड़ने में मदद मिलेगी।

इसके अलावा पश्चिम के लोग जानबूझकर भारत को एक राष्ट्र, एक देश कहने की बजाय उप-महाद्वीप कहना पसन्द करते हैं। मुझे दुःख है कि भारत के भी तथाकथित बुद्धिजीवी यह शब्द अपना रहे हैं। जब आप भारत के लिए यह शब्द इस्तेमाल करते हैं तो इसमें अन्तर्निहित होता है कि भारत एक उपमहाद्वीप का नाम है जिसमें अनेक देश हो सकते हैं। पश्चिम के लोगों का किसी राष्ट्र को तोड़ने से पहले वैचारिक जमीन तैयार करने का यह तरीका होता है। आप किसी भी बड़े सेमिनार में जाएं, वहां पश्चिम के लोग भारत का उल्लेख आते ही बार-बार इंडियन सबकांटिनेंट शब्द का इस्तेमाल करते पायेंगे। अब इस दृष्टि से देखें तो क्या अमरीका स्वयं में महाद्वीप नहीं है? फिर तो ब्राजील, कनाडा, आस्ट्रेलिया भी देश नहीं, महाद्वीप है। इस प्रकार भारत के विरुद्ध यह विष बीज जान-बूझकर भारतीय मानस में बोया जा रहा है। फिर इसके साथ कहा जाता है कि भारत तो एक राष्ट्र नहीं हो सकता, सत्रह मुख्य भाषाएं हैं, बोलियां हैं। सब अलग तरह से सोचते, पहनते हैं। अब उनसे पूछा जाय कि यूरोप में कितनी भाषाएं हैं या क्या पूरे यूरोप के लोग एक ही ढंग से सोचते, पहनते हैं और व्यवहार करते हैं? सत्रह से ज्यादा भाषाओं वाला यूरोप तो आज एकत्र हो रहा है वह पश्चिम के लिए ठीक है, क्योंकि उसमें उसको लाभ है। लेकिन भारत ठीक नहीं है, क्योंकि यहां की एकजुटता से उसे खतरा है।

भारत को तोड़ने के काम में हमारे पाकिस्तान जैसे पड़ोसी खासतौर पर जुटे हुए हैं। यह मैं मात्र गल्पकथा के रूप में या अनुमान के आधार पर नहीं कह रहा हूं। इस बात के पीछे ठोस तथ्य और प्रत्यक्ष अनुभव हैं कि पाकिस्तान का सपना है कि अगर हिन्दुस्थान टूट जाय तो दो लाभ होंगे। एक तो राजनीतिक दृष्टि से एक बड़ा प्रतिस्पर्द्धी टूट जाता है। दूसरा उसका द्विराष्ट्रवादी सिद्धान्त सिद्ध हो जाता है।

इसलिए आज के संदर्भ में बार-बार यह बात दोहराई जानी चाहिए कि राष्ट्रीयता और भौगोलिक सीमाओं की रक्षा का सीधा सम्बन्ध है। भारत के इतने बड़े आकार और उसके जनसंख्यात्मक विस्तार को देखते हुए कुछ देश भयभीत रहते हैं। वे चाहते हैं कि भारत अनेक टुकड़ों में बंट जाये तो बेहतर होगा।

(शेष अगले अंक में)

## डॉ० केशवराम हेडगवार

❑ विजय गुप्त

बगिया में फूल खिलाए सेवा और संस्कार के
कार्य त्याग से किए, जन जन के उद्धार के
पथ सजाए तुमने राष्ट्र सत्कार के
यशोगान मिलकर हम गाएं डाक्टर हेडगवार के।

हर पग जीवन पथ पर संघर्ष और संग्राम थे
राष्ट्र उत्थान को समर्पित जीवन के हर काम थे
क्रान्ति के ऐ अग्रदूत, तुम केशव तुम राम थे
राष्ट्र के कष्ट हरने को तुम सदा तैयार थे
यशोगान मिलकर हम गाएं डाक्टर हेडगवार के।

बिखरी जाति की शक्ति को एकता का मन्त्र दिया
संघ के संगठन सूत्र से राष्ट्र को स्वतंत्र किया
विकास के लिए सत्कर्मा सद्भाव का मन्त्र दिया

सर्वस्व लुटाया तुमने सदा राष्ट्र की पुकार थे
यशोगान मिलकर हम गाएं डाक्टर हेडगवार के।

एफ-१/३३५, मदनगीर, नई दिल्ली-६२

# नास्तिकता और आस्तिकता

❑ अजेय ब्रह्मचारी

**ईशावास्यमिदं सर्वम्**—यह दृष्टि आपके जीवन की शैली और स्वभाव में क्रांति ला देगी। मन शांति से आपूरित हो जाएगा। जो मुझमें है वही आपमें सबमें समाया है, अनुभव कर लें तो एकत्व स्थापित हो जाता है, समदृष्टि का जन्म हो जाता है। यह समत्व (एकत्व) जीवन के गहरे अचेतन में उतर जाए, जीवन में समाविष्ट हो जाए तो पर में भी स्व और स्व में भी पर के दर्शन हो जाएं, एकत्व स्थापित हो जाए फिर वहां एकत्व दृष्टि वाले के लिए मोह और शोक कैसा? मोह और शोक जीवन से विदा हो जाए—**तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः**। (यजु० ४०/८)

इस एक ही दृष्टि की धारणा में वेदों का ऋत, बुद्ध का धम्म, महावीर का धर्म, महर्षि के वचन, कृष्ण का उपदेश सब पकड़ में आ जाते हैं।

सूरज की किरणें, शुभ्र ज्योत्स्ना टिमटिमाते तारे अथाह सागर, पुष्पों का सौन्दर्य, मनमोहक सुगन्धें, वृक्ष पादप वनस्पतियां, दिन-रात, मध्याह्न, सन्ध्या, विविध आकर्षक रंग, पशु-पक्षी, विस्तीर्ण धरा उस पर बिखरा अस्तित्व सब कुछ उस एक की याद का माध्यम बन जाए, उसकी याद दिलाने लगे तो जीवन अहोभाव से भर जाए, जीवन आस्तिक हो जाये। एक दार्शनिक नास्तिकता और आस्तिकता की परिभाषा करता है—

नास्तिकता का अर्थ है, तुम्हारी शिकायतें इतनी बढ़ गईं कि अब तुम परमात्मा को मान नहीं पाते। शिकायतों के कारण तुम परमात्मा की हत्या कर देते हो। आस्तिकता का अर्थ है तुम्हारा अहोभाव इतना बढ़ गया, तुम इतनी कृतज्ञता से भर गये हो कि वह तुम्हें हर जगह दीखने लगता है, हर तरफ उसका हाथ, हर जगह उसकी प्रतीति, हर जगह उसका अहसास होने लगता है। आस्तिकता धन्यवाद की परम स्थिति है। नास्तिकता शिकायत का आखरी रूप है। सबमें वह दीखने लगे तो जीवन धर्ममय हो जाता है। यही दार्शनिक आगे लिखता है—पर को पर जानना हिंसा है, पर में स्व के दर्शन अहिंसा और अहिंसा है धर्म की आत्मा।

मन्त्र का भाव भी यही है कि उसकी सत्ता सबमें समायी है। पर में भी स्व के दर्शन किये जायें। पर में स्व दिख जाये तो पर पर (दूसरा) नहीं रहता। पर का परभाव मिट जाता है। पर स्व में बदल जाता है। फिर कैसा उपद्रव? कैसी अशान्ति? वस्तुतः सारा उपद्रव तो परभाव में ही है। घृणा, द्वेष, लूट, अन्याय, अत्याचार, ईर्ष्या का आधार पर भाव ही तो है। अपने में उसे और उसे ही सबमें देख लेने पर अशांति, अद्विग्नता विलीन हो जाती है, मानस शान्ति से भर जाता है। पर का परभाव अत्याचार, अन्याय, ईर्ष्या, द्वेष, संहारकता का प्रेरक है और स्वभाव (अपनापन) प्रेमसेवा, शांति, अहिंसा, सर्वकता का जनक। सार्त्र अतएव कहा करता था—द अदर इज हेल, दूर नरक है! दूसरों के होने से जीवन नरक हो जाता है। क्योंकि दूसरों के होने पर उससे आगे निकलने की होड़ में आदमी शामिल होता है, यही आगे ईर्ष्या और द्वेष के रूप में परिवर्तित होकर मानस चित्त को उद्विग्न कर देती है। दूसरापन, परायापन जीवन का नरक और अपनापन स्वर्ग है। महाभारतकार व्यास भी अपनत्व से प्रेरित होकर किये गये व्यवहार को ही धर्म की संज्ञा देते हैं। उनके अनुसार भी पर को स्व जानना ही धर्म है। वे कहते हैं—

**श्रूयतां धर्मसर्वस्वं श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम्।**
**आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्॥**

जो तुम अपने लिए न चाहो, उसे दूसरे के लिए भी न करना। पर को, दूसरे को स्वयं मानकर व्यवहार करना। स्वयं जिस व्यवहार की अपेक्षा करो, वही व्यवहार दूसरे के साथ करना। अर्थात् पर को स्व जानना यही धर्म का सर्वस्व सार है, इसे सुनो और धारण करो। सम दृष्टि ही धर्म है। सामान्यतया व्यक्ति का प्रेम अपने परिवार से होता है। गृहस्थ में शनैः-शनैः यह अपनत्व बढ़ता (बंटता) जाता है और रिश्ते-नाते, सम्बन्धों की लम्बी श्रृंखला बंध जाती है और अपनत्व आपसी सहयोग व प्रेम की भावना का सृजन करता है जिसे हम पारिवारिक दायित्व या कर्त्तव्यों के रूप में स्वीकार करते

हैं। यह एक ईकाई की दृष्टि है। वेद का दृष्टिकोण समग्र है, सबमें अपनत्व। यही है विश्व समन्वय का वैदिक दृष्टिकोण। यही सूत्र विश्व-प्रेम व समन्वय भाव का संदेशवाहक है।

यह सूत्र जीवन में उतर जाये तो उसकी अभय पश्चादभयं पुरस्तात् की प्राप्ति साकार हो जाये। जीवन अभय हो जाये और वह कह उठे—**मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे**। मैं समस्त भूतों को मित्र भाव से देखता हुं। यह अपनत्व की दृष्टि जीवन को अभयता व शांति से भर देती है। संतों की चित्तदशा, जो अपार शांति से आपूरित दिखाई देता है यही सूत्र आधार है उसका।

दूसरा सूत्र— **तेन त्यक्तेन भुंजीताः**, मन्त्र का उत्तरार्ध। त्याग भाव से उपभोग, क्योंकि यह सृष्टि, यह सत्ता, यह अस्तित्व उसी का दिया हुआ है। पहला सूत्र गहन हो जाये तो यह भाव जीवन को दिशा दे दे। एक एक शब्द महत्त्वपूर्ण है। त्याग (त्यक्तेन) से उपभोग (भुंजीथाः) कर। बड़ा रहस्य है, इन शब्दों में। त्याग के साथ उपभोग इसे थोड़ा विचारें।

त्याग शब्द का अर्थ अक्सर लोग छोड़ देना समझते हैं। "तेन" उसका ही होने के कारण त्यक्तेन त्याग के भाव से "भुंजीथाः" उपभोग करो। त्याग का अर्थ केवल छोड़ना ही स्वीकार कर लिया गया तो उपभोग शब्द की सत्ता समाप्त हो जाएगी। यहां भाव को सघन करना है, त्याग के भाव को। लिप्तता को छोड़ दें तो निर्लेप हो जायें आसक्त न रहें असक्त हो जायें।

वेद इसे "इदन्न मम" कहकर स्पष्ट करता है। पतंजलि इसे ईश्वर प्रणिधान् आचार्य इसे त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये कहकर गाते हैं, शंकर इसे 'माया संसार का झूठापन, नानक जो तुध भावै सो भलीकार कृण इसे पड़पत्रमिवाम्म्सा और गुरुदेव ओ३म् तू ही ओ३म् तूही गाकर इस भाव की गहन अनुभूति को हम तक पहुंचाने की चेष्टा करते हैं। महर्षि ने इसे तेरी इच्छा पूर्ण कहकर स्वीकारा।

त्याग का आशय निर्लिप्ता, चिंता, आक्रोश, शिकायत सबको विदा करने का सूत्र त्याग भाव से भर जाओ। केवल करना कर्त्तव्य रह जाए। गीता कहती है, तुम्हें कर्म का अधिकार मिला है, फल का नहीं। कर्म करो फल की चिन्ता न करो। वह उसके हाथ में है।

कर्त्तव्य की दिशा उसका ज्ञान वह अन्तर्यामी भीतर ही छिपा हुआ सबको करा रहा है। इसी परमात्म ध्वनि (आत्मा की आवाज) को महर्षि दयानन्द सहित अन्यान्य सभी ऋषि-मुनियों ने धर्मरूप में स्वीकारा। स्वामी दयानन्द के अनुसार अधर्माचरण में जो भय, लज्जा, संकोच का भाव मन में उपस्थित होता है, यह उसी का निर्देशन है कि इस कृत्य से तुम बचो। जपैजी साहब में गुरु नानक कहते हैं—

**हुकमी हुकुम चलाये राह। नानक विगसै बेपरवाह॥**

वह प्रभु आदेश के द्वारा पथ का निर्देश करता है, हम उसे सुने या न सुनें वह राह दिखाता जाता है बताता जाता है। हमारे अनसुनी करने के बावजूद वह थकता नहीं, क्रोध या उद्वेग उसे छू नहीं पाता। वह बेपरवाह है स्वयं।

यह बेपरवाह शब्द ध्यातत्य है, इसे समझना है। नानक का बेपरवाह शब्द वेद की तेन त्यक्तेन भाव की अनुगूंज है, इसे समझें। नानक कहते हैं वह सबको हुकुम देता हुआ सबकी परवाह करता हुआ भी बेपरवाह है। बेपरवाह शब्द का अर्थ उपेक्षा नहीं है। त्याग और बेपरवाह शब्द का अर्थ उपेक्षा मानकर हम बड़ी भूल करते हैं। परवाह का एक अर्थ चिन्ता भी है। वह बेपरवाह अर्थात् निश्चिन्त है अतएव जो योगीजन उसके सान्निध्य में अनुभूत कर लेते हैं उन्हें भी चिन्तित नहीं किया जा सकता। हमारी परवाह करने का क्षेत्र छोटा है। उस बेपरवाह के सान्निध्य को अनुभव करने वालों के परवाह करन की शक्ति बढ़ जाती है और वह समस्त भूतों की चिन्ता करता हुआ भी स्वयं निश्चिन्त रहता है। सामान्य व्यक्ति तो परिवार की चिन्ता में ही उद्विग्न हो जाता है।

उस प्रभु का हुकुम, उसकी सत्ता का स्वीकार जीवन निश्चिंत हो जाता है। केवल करना कर्त्तव्य हो जाये। सुना है एक देहाती यात्रा के लिए रेल पर सवार हुआ। उसने अपना सामान सिर पर रखा हुआ था। रेल चल रही है, सिर पर सामान है, देहाती खड़ा है। लोगों ने उसे समझाया कि सामान नीचे गाड़ी पर रख दे। वह माना नहीं, कहने लगा मैंने टिकट तो अपना ही लिया है। लोगों ने उसे समझाया कि चाहे वह सामान सिर

पर रखे या गाड़ी पर भार तो गाड़ी पर ही पड़ेगा, वही इसे वहन करेगी। यही मैं आपसे भी कहना चाहता हूं। प्रभु को अपना भार समर्पित कर स्वयं निर्भार हो जाओ। विनोबा कहते हैं—

"कर्मों को मनुष्य करे पर उन्हें करता हुआ भी अहंकार को बीच में न आने दे। अहंकार आया तो आसक्ति साथ आएगी।" मान-अपमान, सुख-दुःख, भूख-प्यास, सारे द्वन्द्वों को उसके प्रति समर्पित कर दिया जाए, त्याग दिया जाये। आचार्य शंकर के अनुसार भी सब द्वन्द्वों को दूर करने का एक मात्र उपाय यही है कि अपनी सब इच्छाओं को किसी के (उसी के) अधीन कर दो, त्याग दें उसकी इच्छानुसार चलें।

**सार, मन्त्र का भाव**

जीवन के उपयोग के लिए दो सूत्र। पहला सूत्र ईशावास्यमिदं सर्वम्। परमात्म सत्ता का स्वीकार। उसकी सत्ता अपरिमित शक्ति का अहसास कर धर्माचरण। एक ऐसी समग्र दृष्टि कि परभाव मिट जाए, अपनत्व की धारणा हो जाये। अपनत्व से प्रेरित हो सबकी उन्नति में सहयोगी बने रहें। समत्व दृष्टि का विस्तार, यही आत्मा का स्वाभाविक गुण है। दूसरा सूत्र—त्याग का भाव, लालच का परित्याग। अपनी इच्छाओं का उसके प्रति समर्पण। निश्चिंत जीवन यापन, कर्त्तव्यों के प्रति सजगता। चिन्ता से मुक्ति। शान्ति की धारणा।

प्रभु हमें बुद्धि, विवेक प्रदान करें, हम इन दोनों सूत्रों को धारण कर पायें, चित्त शांत हो जाये।

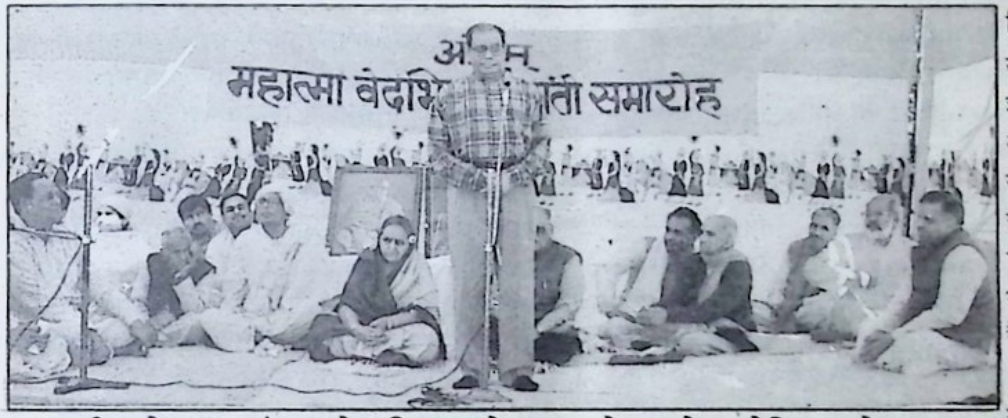


*श्री रामेश्वर अशांत अपने अभिनन्दन के बाद सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए।*

*(पृष्ठ २६ का शेष)*

राजधानी दिल्ली की महापौर श्रीमती शकुन्तला आर्या नें श्री अशांत को वेद तथा संस्थान द्वारा प्रकाशित वैदिक साहित्य भेंट किया। समारोह के उप स्वागताध्यक्ष श्री आर० डी० कौशिक ने श्री अशांत को स्वामी दयानन्द का चित्र और डॉ० सारस्वत मोहन मनीषी ने अपनी कृतियां समर्पित कीं। अपने अभिनन्दन के उत्तर में श्री अशांत ने कहा कि वेद और हिन्दी भाषा अमरीका में बसे विभिन्न भाषा-भाषी एवं मत, पंथ तथा सम्प्रदायों के अनुयायी भारतीयों को एकता के सूत्र में आबद्ध करने में महती भूमिका निभा रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा कि ज्ञान-विज्ञान के अक्षय भण्डार के रूप में वेदों की गरिमा को अब विदेशी भी मुक्तकण्ठ से स्वीकार कर रहे हैं।

कार्यक्रम का समापन वैदिक उद्घोष एवं शान्ति पाठ से हुआ। वेद मन्दिर में एक माह तक चले योग साधना शिविर का समापन भी १५ मार्च को सायंकाल हुआ। शिविर में देश के विभिन्न भागों से आए चालीस साधकों ने भाग लिया।

## आर्य समाज फोट मुम्बई

मुम्बई : आर्य समाज फोर्ट, मुम्बई में ९ अप्रैल से १२ अप्रैल तक यजुर्वेदीय महायज्ञ का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर अनेक वैदिक विद्वान् तथा भजनीक भी आमन्त्रित किए गए है। यज्ञ के ब्रह्मा डॉ० वागीश शर्मा होंगे।

# पश्चिमी देश और प्राच्य विधाएं—२

❑ डॉ० भवानीलाल भारतीय

यूरोप के जिन देशों ने प्राच्य विधाओं तथा संस्कृत के क्षेत्र में सर्वाधिक प्रशंसनीय कार्य किया वह देश है जर्मनी। मैक्समूलर ने अपनी जर्मन जन्मभूमि जर्मनी का संस्कृतकरण कर उसे 'शर्माष्य देश' की संज्ञा दी थी। उसने आक्सफोर्ड को 'गोतीर्थ' का नाम दिया और वह स्वयं को 'मोक्षमूलर भट्ट' कहलाना अधिक पसन्द करता था। जर्मनी संस्कृत पठन-पाठन की परम्परा पर्याप्त पुरानी रही हैं प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक शापनहार को जब उपनिषदों के अध्ययन का अवसर मिला और जब उसने आर्य प्रज्ञ के सर्वोच्च प्रतीक रूप इन ग्रंथों के प्रतिपाद्य को आत्मसात किया तो उसका मन मयूर नाच उठा। उसने ब्रह्म विद्या का मनोज्ञ विश्लेषण करने वाले इन ग्रंथों के बारे में लिखा It is the most satisfying and elevating reading which is possible in the world it had been the solace of my life and will be the solace after my death. अर्थात् भूमण्डल के साहित्य में उपनिषदों से बढ़कर आत्मा को ऊंचा उठाने वाली कोई अन्य पुस्तक नहीं है। इन ग्रंथों से मुझे इस जीवन में तो शान्ति और सान्त्वना मिली ही है, मृत्यु के उपरान्त भी यह औपनिषद ज्ञान ही मुझे शान्ति देगा। यहां यह ध्यातव्य है कि शापनहार ने उपनिषदों के एक लैटिन अनुवाद को पढ़ा था। यह लैटिन अनुवाद मुगल सम्राट शाहजहां के बड़े पुत्र दाराशिकोह के द्वारा किये गये सिरे अकबर (सर्वोच्च गुप्त विद्या) नामक फारसी अनुवाद के आधार पर किया गया था।

जर्मनी में संस्कृत अध्ययन की नींव बहुत पहले ही रख दी गई थी। एक जर्मन शिक्षाशास्त्री डॉ० जी० बीजे ने अपने १७ जुलाई १८८० को स्वामी दयानन्द के नाम लिखे पत्र में जर्मनी में संस्कृत के अध्ययन अध्यापन की स्थिति का उल्लेख किया है। यह जानकारी डॉ० बीजे को मारबर्न विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्राध्यापक प्रो० फर्डिनेण्ड ने दी थी। इस सूचना के आधार पर उसने बताया कि जर्मनी के प्रत्येक विश्वविद्यालय में संस्कृत पढ़ाई जाती है और इस कार्य के लिये प्रायः दो अध्यापक रहते हैं। उसने तत्कालीन जर्मन विश्वविद्यालयों में कार्यरत जिन संस्कृत अध्यापकों का विवरण इस पत्र में दिया है। वे इस प्रकार हैं— एल्ब्रेटन्ट वेबर (बर्लिन), पिशेल (कील), जैकोबी (म्युइन्स्टर) एल्ब्रेप्न होफर (ग्रीफ्सवाल्ड) अर्मेस्ट कुहन (मिनचेन) गिल्डमेस्टर (बोन) आफ्रेरन्ट (बर्लिन) कुछ काल तक यह बोन विश्वविद्यालय में भी रहा था। मियोनेयर (डोरपट) स्टेन्जलर (ब्रेसलाऊ) गस्ट पॉट (हाले) विंदिश (लिपजिग) गोल्डश्मिट्ज (स्ट्रासवर्ग), वेन्फे (गोटिनजेन) ओस्थोफ (हाइडेलवर्ग) रूडोल्फरॉथ (ट्यूबिनजे) स्वीगेल (लमजेन), डेलबर्क (जेना) नेसेनाउन (कोनिंगबर्ग)।

यूरोपीय देशों में सम्भवतः जर्मनी ही ऐसा देश है जहां संस्कृत का सर्वाधिक पठन-पाठन रहा तथा जहां के प्राच्य विद्या-विशारदों ने संस्कृत साहित्य को शास्त्रीय तथा लौकिक विधाओं के शोध, अनुसंधान, सम्पादन तथा प्रकाशन में सर्वाधिक रुचि ली। अमेरिका, रूस, इटली आदि अन्य पश्चिमी देशों में भी संस्कृत अध्ययन के प्रति पर्याप्त रुचि रही है। यहां पर विचार का एक अन्य बिन्दु यह है कि पश्चिम के इन संस्कृत विद्वानों का इस विद्या में व्युत्पन्न होने तथा जीवन पर्यन्त तत्सम्बन्धी लेखन, अनुसंधान, पठन-पाठन आदि के पीछे उनका क्या मन्तव्य रहा है? यह तो एक तथ्य है कि इन विद्वानों का यह संस्कृत अनुशीलन अत्यन्त लगन, उत्साहपूर्ण तथा निष्ठा के साथ किया गया था। उनके इन प्रयत्नों से भारत की प्राचीन मनीषा संसार के समक्ष प्रतिष्ठित हुई। अतः ये विद्वान् हमारे साधुवाद के पात्र तथा सम्मानार्थ हैं। परन्तु कतिपय ऐसे संकेत भी इन्हीं के लेखन से मिलते हैं जिससे यह तथ्य स्पष्ट होता है कि पश्चिम के इन प्राच्य विद्याविदों में से अनेक विद्वान् कतिपय पूर्वाग्रहों को लेकर अथवा किसी प्रयोजन विशेष की सिद्धि के लिये ही इस कार्य में प्रवृत्त हुए थे।

जब भारत में ब्रिटिश सत्ता स्थापित हो गई तो

शासकों ने यह अनुभव किया कि इंग्लैंड अपनी प्रजा को जाने बिना उस पर शासन नहीं कर सकता और प्रजा को तभी जाना और समझा जा सकता है जब उसकी भाषा और साहित्य, उसके काव्य और पुराश्रुति का ज्ञान हो। (बेंजामिन जोवेट) भारत के प्रथम अंग्रेज गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स ने मेसफील्ड को लिखे अपने एक पत्र में अपना मन्तव्य इस प्रकार प्रकट किया था। "मेरी इच्छा है कि ब्रिटिश सरकार का प्रभुत्व बंगाल में उसके प्राचीन कानूनों की नींव पर स्थापित हो।" इन पुरातन कानूनों का अध्ययन करने के लिये संस्कृत का ज्ञान आवश्यक था क्योंकि प्रायः सभी हिन्दू विधि ग्रंथ संस्कृत में ही हैं। पाश्चात्य संस्कृतज्ञों और विशेषतः अंग्रेज संस्कृत विदों के अध्ययन के पीछे तो अपनी नौकरशाही को मजबूत करने की ही मनोवृत्ति कार्य कर रही थी। वे यह मानते थे कि भारत जैसे सुविशाल देश परं शासन करने वाले आंग्ल शासकों के लिये यह आवश्यक है कि वे शासित देश की भाषा, सभ्यता, संस्कृति, धर्म और विचारधारा से पूर्णतया परिचित हों। फलतः वे प्रशासनिक सेवा (आई० सी० एस०) में भर्ती होने वाले भारत के भावी प्रशासकों की जानकारी के लिये संस्कृत साहित्य के उन क्षितिजों को उजागर करना चाहते थे जिनकी सहायता से वे भारतीय प्रजा की धार्मिक तथा सामाजिक स्थितियों से सुपरिचित हो सकें। संस्कृत साहित्य के इतिहास लेखक आर्थर एन्थनी मैकडानल ने इसी विचार को इस प्रकार व्यक्त किया है— Owing chietly to the lack of an adquate account of the subject few even or the young men who leave these sheres every year to be its future rulers" (भूमिका) अर्थात् ब्रिटेन के समुद्रतट से प्रतिवर्ष भारत की ओर प्रस्थित होने वाले युवकों में ऐसे बहुत कम हैं जो उस देश के बारे में इच्छित जानकारी रखते हैं।

मैकडानल ने अपना यह ग्रंथ (संस्कृत साहित्य का इतिहास) सिविल सर्विस के नौजवानों को भारत में धर्म, संस्कृति, भाषा और साहित्य की आवश्यक जानकारी देने के लिए ही लिखा था और उन्हें यह स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं है कि संस्कृत के अध्ययन की प्रथम प्रेरणा उन्हें अपनी भारतीय उपनिवेश की व्यावहारिक प्रशासनिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखने के कारण ही मिली। उसका मूल लेख इस प्रकार है "The first impulse to the study of Sanskrit was given by the practice administrative needs of our Indian possessions."

यूरोप के संस्कृतज्ञों का इस विषय में अध्ययन में प्रवृत्त होने का एक अन्य प्रयोजन था भारतीय हिन्दू धर्म को ईसाइयत से हीन सिद्ध करने की उनकी प्रवृत्ति। मोनियर विलियम्स तथा मैक्समूलर ने अपने इस हार्दिक भाव को कहीं भी छिपाया नहीं है। मैक्समूलर ने अपने ऋग्वेद के संस्करण को प्रकाशित करने के पीछे ही अपने मनोभाव को प्रकट करते हुए अपनी पत्नी को जो पत्र लिखा था, उसका यह अंश देखें—"मेरी यह ऋग्वेद का संस्करण और अनुवाद भारत के भाग्य को निश्चित रूप से प्रभावित करेगा। यह वेद ही भारतवासियों के धर्म का मूल है तथा इस मूल के शाखा-प्रशाखा रूप जो महान् भारतीय धर्म रूपी महाविटप गत तीन हजार वर्षों में फैला फूला है उसे नष्ट करने के लिये भारतवासियों को यह बताना भी आवश्यक है कि उनके वर्तमान धर्म का मूल यह वेद कैसा है?" (फ्रेडरिक मैक्समूलर का जीवन और पत्र व्यवहार भाग १. पृष्ठ ३४६)

प्रो० मोनियर विलियम्स ने अपने ग्रंथ Indian wisdom (भारतीय प्रज्ञा) में यह स्पष्ट लिखा है कि "अंग्रेजों को भारत पर शासन करने का अधिकार मात्र इसलिये नहीं मिला था कि वे वहां रहकर विभिन्न राजनैतिक अथवा सामाजिक परीक्षण करें अथवा व्यापार में उन्नति करें, अपितु इस विशाल भूभाग का शासन सौंपने में मानो नियति की यह भी इच्छा कार्य कर रही थी कि इस उपमहाद्वीप पर ईसाई धर्म के पुनरुद्धारक प्रभाव का सर्वत्र प्रसार किया जाय।" (ग्रंथ की प्रस्तावना पृ. ११) पश्चिमी संस्कृतज्ञों के इन प्रच्छन्न उद्देश्यों को कतिपय जागरूक भारतीय विद्वानों ने उजागर करने का साहसपूर्ण प्रयत्न किया है। उसके लिये मैं पाठकों को स्व० पं० भगवदत्त के एक लघु ग्रंथ Western Indologists : A study in Motives तथा स्व० ब्रह्मदत्त भारती की पुस्तक Maxmuller A Life long masquerade (Era Books New Delhi 1992) को पढ़ने की सिफारिश करूंगा।

८/४२३, नन्दनवन, जोधपुर

# वर्तमान परिवेश और साहित्यकार का दायित्व

□ डॉ० त्रिलोकीनाथ 'प्रेमी'

**साहित्यकार** समाज का अंग है। समाज से कट कर और हटकर न उसका अस्तित्व संभव है और न सृजन। आखिर, सृजन के लिए कच्चा माल तो वह समाज से ही बटोरता है और तदुपरि उसे प्रांजल, परिष्कृत तथा सुसंस्कारित करके समाज को ही वापस लौटा देता है। साहित्य सृजन की इस प्रक्रिया से यह तथ्य तो स्पष्ट हो जाता है कि साहित्य और समाज परस्पर एक-दूसरे के पूरक हैं तथा साहित्यकार समाज का परिष्कार-संस्कार करता है यह परिष्कार तन का नहीं मन का है, बाहर का नहीं भीतर का है तथा विचार का नहीं भाव का है। साहित्य भाव से ही संपृक्त होता है, **'सहितेन भाव साहित्यम्'** लेकिन इसका आशय यह कदापि नहीं कि साहित्य में बौद्धिक विचारों का समावेश होता ही नहीं। होता है लेकिन तभी जब बुद्धि हृदय को साथ लेकर चलती है। तात्पर्य दोनों की यात्रा का पथ और गंतव्य एक ही होता है। दोनों में पूर्व संतुलन सामंजस्य रहता है। फिर मनुष्य भी तो शरीर और आत्मा का, मस्तिष्क और मन का, ज्ञान और प्रेम का तथा भौतिकता और अध्यात्म का समिश्रित रूप है। साहित्य का सम्बन्ध इसी मनुष्य से है। साहित्य और कलाएं इसी के हृदय का सुसंस्कार करती हैं, उसे संवेदनशील बनाती है। मनुष्य इसी संवेदनशीलता के कारण ही मनुष्य है। इसी संवेदशीलता के सहारे वह अपने भीतर के 'मनेर मानुष' को पहचान पाता है. यह मनेर मानुष कोई व्यष्टि मानव नहीं, बल्कि प्रत्येक मानव के अन्तस् में रहने वाला समष्टि मानव है, जिससे जुड़कर परिचित होकर मनुष्य एकात्म होता है और पूर्ण हो जाता है, खंड-खंड होने से बच जाता है। अपनी रचना के माध्यम से इसी एकात्म भाव को समाज में पैदा करना साहित्यकार का प्रथम दायित्व है। और यह तभी संभव है जब साहित्यकार जन-जीवन से लोक जीवन में आत्मीयता स्थापित करें। इसके लिए उसे समाज और जीवन की गहराई एवं विस्तार में उतरना होगा। गली-गली और गैल-गैल, झोपड़ी से महल तक, खेत-खलिहानों से कल-कारखानों तक, भिखारियों और नेताओं से लेकर धर्मात्माओं-दाताओं, मिल मालिकों, पूंजीपतियों तथा सत्ता एवं राजनीति के दावेदारों तक दस्तक देनी होगी। बाजार-हाट, मन्दिर-देवालय, धर्मशाला-सराय, तीर्थ, सैलानी स्थलों ढाबा-पंचसितारा होटलों, गांव-गांव, नगरों-महानगरों की खाक छाननी होगी। जो साहित्कार लोक के इस व्यापक परिवेश में जीवन के दुःख-दर्द को, हास-परिहास को, आनन्द-प्रह्लाद को हृदयंगम नहीं कर पाता, वह सच्चा साहित्यकार नहीं, कुछ और भले ही हो। उसकी अनुभूति में न संवेदनशीलता होगी और न सृजन में सहृदय सामाजिक को झकझोरने का सामर्थ्य।

**जन-जीवन के साहचर्य की इस पहली आवश्यकता और संवेदनशीलता के मर्म को आज के साहित्यकार ने भुला दिया है। वह अपने आपको जन कवि और जन साहित्यकार कहने का दंभ तो भरता है, पर जनता के मध्य आने में कतराता है। उसे महानगरों और पंचसितारा होटलों के ग्लैमर में रहकर सृजन की प्रेरणा मिलती है। सत्ताधारी नेता मंत्रियों और पूंजीपतियों के साथ उठने बैठने, हंसने-बोलने और सम्मान-पुरस्कार हथियाने में नित्य पत्र-पत्रिकाओं में छपने आकाशवाणी और दूरदर्शन पर मुखरित होने में उसे तसल्ली मिलती है, सुख-चैन मिलता है। तभी तो वह महानगरों और राजधानियों को छोड़कर गांवों और खलिहानों की ओर जाना अपने भीतर के दंभभरे साहित्यकार का अपमान समझता है।** यों तो वह प्रेमचंद की परम्परा का सशक्त हस्ताक्षर है, पर अनुभूति की सच्चाई और गहराई में नहीं वह इंडिया में रहने बसने का आदी हो गया है। भारत तो उसकी कल्पना का देश है और प्रेमचंद तथा गांधी के भारत से उसका सरोकार ही कहां तभी तो महानगरों की घृणित और कामुक जिन्दगी के यथार्थ चित्रण में ही वह अपने सृजन को इतिश्री मानता है। वह भूल जाता है कि सच्चा साहित्यकार समाज और व्यापक जीवन का द्रष्टा एवं सृष्टा होता है। इसी से उसके साहित्य का यथार्थ आदर्श के सहारे पूर्ण होता है। वह मानव जीवन को अन्धकार से प्रकाश की ओर लाता है, गंदगी से निखार

और पवित्रता की ओर लाता है। द्वेष और वैमनस्य से स्नेह सौहार्द की ओर लाता है। वह सामाजिक जीवन को टूटने और खंड-खंड होने से बचाता है। अपने देश के इस व्यापक सामाजिक यथार्थ को विस्मृत कर यूरोपीय परिस्थितियों का भारतीय परिस्थितियों पर आरोपण करते हुए, पाश्चात्य जीवन की यथार्थ संवेदनाओं को उसने अपने ऊपर ओढ़ लिया है। आधुनिक है। इसके मूल में हमारी और पश्चिमी संस्कृति तथा मूल्यगत आस्था की दृष्टि ही प्रमुख है आधुनिकता से प्रेरित साहित्यकार का विश्वास संघटन में होना चाहिए, विघटन में नहीं। संघर्ष में होना चाहिए, संकट में नहीं तभी वह परिस्थतियों की विषमता से जूझकर लोक चेतना से स्पंदित नए भाव बोध को पा सकता है।

पश्चिम के परिवेश और हमारे परिवेश में अन्तर है। यह पूंजीवादी प्रचार के कारण हो या साम्यवादी रुझान के कारण किन्तु इस वैचारिक दवाव ने भारतीय साहित्य की रचनाधार्मिता का बड़ा अहित किया है। आज रचनाकार की रचना का परिवेश पाठक के परिवेश से बिलकुल अछूता रहा है। यह उधार मन का संसार इसी से भारतीय सहृदय पाठक के गले नहीं उतरता। इसका मॉडल पश्चिमी पैटर्न पर तैयार किया जाता है, हमारा परिवेश संसार तो उसमें है ही नहीं। यही कारण है कि हिन्दी साहित्य प्रकाशित तो प्रभूत मात्रा में होता है पर उसके, पाठक खोजने पर भी नहीं मिलते। परिवेश के प्रति रचनाकार की सजगता ही पर्याप्त नहीं है। उसकी संवेदना का प्रचार और गहराई भी महत्त्वपूर्ण है। लोक मंगल का भाव साहित्य की सर्वोपरि गणशक्ति है। **आज साहित्य दुर्गुण और संस्कारविहीन होता जा रहा है। संवेदना और भाषा का कोई तारतम्य नहीं रह गया है। साहित्यकार की भूमिका जीवन और अमृत से जुड़ी है, संहार और गरल से नहीं। संहार और गरल तो राजनीति के हिस्से में है। साहित्यकार जब राजनीति की वैसाखियों को पकड़ता है, तब उसका सृजन छूट जाता है।** उसमें संवेदना की अभिव्यक्ति का हनन हो जाता है। साहित्यकार तो गरल को भी रसायन-बनाता है औषधि बनाता है। वह फैशन परस्त कभी नहीं होता। अतः वह उसका पुनीत दायित्व है कि वह उदात्त से जुड़े, जिससे विश्व एक नीड़ बन जाने "वसुधैव कुटुम्बकम्" का साक्षात्कार हो सके। अनुभूति की सच्चाई का अहसास कल्पना के सतरंगी पंखों के सहारे संभव नहीं। इस सत्य को पहचानें और रचने-रचाने के लिये कुछ खोने की विवशता है, खोजने की जरूरत है जिन खोजा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ। साहित्य कोई सेत की वस्तु नहीं है। खोई चीज पाई अठ धर कोने में खाई सच्चा साहित्य साधना का सुफल होता है। तभी तो साहित्यकार सच्चे अर्थों में विरले ही होते हैं, पर वे वन्दनीय होते हैं। कवि मनीषी परिभू स्वयम् की उक्ति का प्रयोग शास्त्रकारों ने उनके लिए किया है। उन पर किसी का प्रतिबंध नहीं होता और न वे किसी से प्रतिबद्ध होते हैं। **"नियमिकृत नियम-रहिताम्।** प्रतिबद्धता साहित्यकार को उसके दायित्व से च्युत करती है। उसे बौना और सीमित बनाती है।

**वर्तमान परिवेश में साहित्यकार की यह बड़ी कमजोरी है कि अहं तुष्टि और आत्म-विज्ञान के लिये वह पादों और प्रदूषित राजधानी के हाथों बिक गया है। अर्थ और काम उसके जीवन तथा सृजन के परम पुरुषार्थ रह गये हैं। पुरुषार्थ चतुष्टय से वह वंचित हो गया है और भूल गया है कि अर्थ और काम तो धर्म और मोक्ष से अनुशासित होकर ही जीवन के लिए हितकारी बनते हैं। अन्यथा जीवन को खोखला कर देते हैं।** संभवतः इसी कारण आज साहित्यकार भीतर से रीता हो गया है। अपनी और अपनी रचना की व्याख्या वह स्वयं करने लगा है। भारतीय मनीषी ने कभी आत्म प्रचार को उचित नहीं समझा। तभी तो रचनाएं मिलती हैं, पर रचनाकार के संबंध में बहुत कम और रचना प्रक्रिया के संबंध में तो बिल्कुल नहीं मिलता। परन्तु आज रचना और रचना प्रक्रिया की बात रचनाकार से ही पूछी जा रही है। स्पष्ट है, रचना अपना मर्म प्रकट करने में असमर्थ है। शायद अतिशीघ्र प्रसिद्धि की ललक और आत्म प्रचार का भाव ही साहित्यकार में अधिक है। जिसे वह आलोचकों पर छोड़ना नहीं चाहता है। इस भाव को निरंतर सींचना साहित्य सृजन में बाधा उत्पन्न करता है। इसी मानसिकता के कारण लोक मंगल का भाव साहित्य से तिरोहित हो गया है। सत्यम् शिवम् और सुन्दरम् के नाम पर वह असत्य, अशिव और असुन्दर को छू रहा है। सरलता के नाम पर वह जटिल और दूभर हो गया है। उसकी कविता अकविता हो गई है। भाषा इतनी पेचीदा हो गई है कि उसका मर्म ही अनुभूति की पकड़ में नहीं आता तथा रस का तो पूर्णतः अभाव ही हो गया है। संतोष का विषय है कि

अब साहित्यकार लोक जीवन, लोक भावभूमि तथा लोक भाषा की ओर मुड़ने लगा है। आधुनिकता की अंधी दौर साहित्यकार के हित में नहीं।

**आधुनिकता तात्कालिकता का बोध कराती है। यह न अतीत है और न भविष्य। सतत परिवर्तनशील होना इसका स्वभाव है। यह किसी स्वस्थ परम्परा का निर्माण नहीं करती। अतः यह संस्कृति नहीं सभ्यता है।** सभ्यता के ही विकसित मापदण्ड इसका निर्धारण करते हैं। साहित्य और संस्कृति के सारे मान और मूल्यों को यह नकारती है। हम परिवर्तन के विरोधी नहीं। परिवर्तन तो सृष्टि का कटु सत्य है। किन्तु जब परिवर्तन का आशय सिर्फ अधोगति हो, रूप रंग और आकार का खोना हो, सांस्कृतिक मूल्यों और स्वस्थ परम्पराओं से कटना हो, तब ऐसे परिवर्तन पर प्रश्नचिह्न लगना आवश्यक है।

**पश्चिम की उपभोक्तवादी दृष्टि और भौतिक विज्ञान के जड़वादी दर्शन ने हमें निपट वस्तुओं रत बना दिया है। प्रकृति, जीवधारी और मनुष्य सभी उपभोग की वस्तुए हैं।** आत्मीयता का भाव लुप्त हो गया है। हम भूल रहे हैं कि हम जितने भीतर हैं उससे कहीं अधिक बाहर हैं। हमारे उत्सव भीतर के भाव की ही छलकन हैं। **पेड़ों में फल-फूल खाना हमारा ही विकास है। तीर्थ हमारी ही आन्तरिक पवित्रता है। जब अन्तःकरण ही हमारा अमानुषी और अपवित्र एवं दूषित हो जाएगा तो बाहर बचेगा ही क्या? परम्परा अपनी जमीन है जिससे कटकर अपना विकास संभव नहीं।** जब आदमी स्वयं को बाहर देखता है तब वह भोक्ता रहता है, न भोग्य। मानवेत्तर प्रकृति के साथ मानव का तादात्म्य करना साहित्यकार का दायित्व है यही तो मानुषी भाव है। भव का ही मूल्य है यही सनातन है। परिवेश की इसी अज्ञानता के कारण स्वातंत्र्योत्तर भारतीय लेखक अवसादग्रस्त, छुटन, अजनबीपन, क्षण सत्य और अस्तित्ववाद के गलियारों में ही भटकता है। साहित्य ने सदैवएकात्मकता की खोज की और अन्धकार को चुनौती दी है। इसी से असंख्य मन मिलेंगे एकत्र होंगे और प्रकाश की किरण आयेगी। अलगाव और बिखराव तो पश्चिमी दृष्टि है। हम तो सबको साथ में लेकर चले हैं। अध्यात्म चिन्तन ही हमारा जीवन दर्शन है। अध्याता का अर्थ है दूसरों में फैलना तथा बराबर होना। अपरिग्रह का भाव ही हमारे लिए सर्वोपरि है। हिल मिलकर रहना प्रकृति है, दूसरों का छीनना या लूटना विकृति है और दूसरों के लिए त्याग करके संतुष्ट होना संस्कृति है। इतिहास से अधिक यह भाव सत्ता महत्त्वपूर्ण है। अतः साहित्यकार आज के भौतिकवादी परिवेश में भाव के इस सत्य और सौन्दर्य को पहिचानें। उसकी रचनाधर्मिता की यही प्रासंगिकता है कि उससे लोक का कल्याण हो, व्यापक समाज को मंगलकारी दिशा मिले। उसमें नयापन हो, लेकिन जीवन को सहज सरल और मधुर सुखद बनाने वाला। साहित्य तो मानव जीवन की भावनाओं का वह फूल बंगला है जो जीवन को प्रतिपल सरस और सुगन्धमय बनाये रखता है। जीवन की पूर्णता संसार के भोग में ही नहीं, इसमें भी तो आगे गति है जहां मैं का नहीं "हम" का अस्तित्व है, जहां भाव और संवेदना का माधुरी है। प्रेम का प्रकाश और परस्पर सहयोग की प्रेरणा है। जहां करुणा और क्षमा का आचरण है। साहित्यकार इन मानवीय शाश्वत मूल्यों की पुनर्प्रतिष्ठा के लिए सजग और चैतन्य बना रहे, यह अपेक्षित है।

साहित्यकार को प्रगतिशील भी होना चाहिए। सम-सामयिकता इसीलिए उसके साहित्य के काव्य सृजन की सार्थकता और अपेक्षा है। लेकिन यह प्रगतिशीलता अथवा सम-सामयिकता आयातित कभी नहीं। आज के परिवेश में हर आयातित वस्तु का मूल्यांकन होने लगा है। शायद इसीलिए साहित्य भी आयातित हो गया है लेकिन यह मनोवृत्ति कितनी घातक सिद्ध हो रही है, किसी से छिपा नहीं। सच्चे भारतीय साहित्यकार का आज इसी से प्रभाव हो गया है। अतः उसे इस प्रवृत्ति का परित्याग कर देश की मांटी संस्कृति और सांस्कृतिक मूल्यों से परिचित होना चाहिए, जिनके आधार पर कभी कवि वाणी गूंज उठी थी। सारे जहां से अच्छा हिन्दोस्तां हमारा, हम बुलबुलें हैं इसकी यह गुलिस्तां हमारा। यही हमारी पहिचान है, सांस्कृतिक धरोहर है इसी से भारतीय वांग्मय की गरिमा है। किन्तु आज हमारा परिवेश बदल रहा है। सोच बदल रहा है। हमारी मान्यताएं, हमारे विश्वास, हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्य सभी कुछ परिवर्तित हो रहा है। हम बुद्धि के प्रति इतने दुराग्रही हो गए हैं कि मन की बात को कोरी भावुकता कहकर उड़ाने की चेष्टा करते हैं और भूल जाते हैं कि साहित्य का लेखन और पठन-पाठन सभी मानसिक व्यापार है। इसका प्रत्यक्ष सीधा सम्बन्ध इच्छाशक्ति से है।

इसी इच्छाशक्ति को पूंजी अप्राश्रित समूह माध्यम तथा उपभोक्ता संस्कति वेगैल चेपटी और निर्जीव कर डालने का षड्यंत्र रच रही है। दूरदर्शन अलग एक अपसंस्कृति को जन्म दे रहा है। अतः आज के प्रदूषित परिवेश में साहित्यकार दृढ़ता से इनकेविरोध में बिगुल बजायें और देश की अस्मिता तथा मानवीय इच्छा-शक्ति को सहज स्वस्थ तथा प्राण बनाने में रचनात्मक सहयोग दें।

हम सारहीन नितांत नयेपन या मौलिकता के पक्षधर नहीं। आज का सामाजिक जीवन पीढ़ियों के चिरंतन प्रवाह और कड़वे-मीठे अनुभवों, नैतिक मूल्यों एवं लोक विश्वासों की प्रामाणित मनोवैज्ञानिक मनोभूमिकाओं का प्रतिफलन है। इसके निर्माण में दादा-परदादा को न जाने कितनी नसीहतों और दादी-नानी की न जाने कितनी कथा-कहानियों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है इसी से प्रामाणिकता में हमारा अडिग विश्वास है। और प्रामाणिकता के लिए परम्परा से जुड़ना अनिवार्य है। इसी से साहित्यकार के लिए न हर नवीनता ग्राह्य होती है और न हर पुरातनता त्याज्य फिर सत्य बात तो यह है कि अतीत से हटकर वर्तमान से जुड़ने का न कोई औचित्य है और न प्रयोजन। भविष्य के निर्माण की दिशा इन दोनों के सामंजस्य में है। इस कटुसत्य का समावेश साहित्य के सृजन और कृतित्व में करना साहित्यकार की सफलता का ही द्योतक है। आज समाज में कुत्सित भेद तथा घृणित साहित्य का ही बोलबाला है। साधक साहित्यकार को जीवन और समाज की इस विषमता को उभारकर भी जीवन के उद्वान्त को ही रेखांकित करना चाहिए। स्वयं को संवेदनशील और उदात्त बनाकर सहृदय सामाजिकों को उदात्तता के सांचे में ढालने के गुरुतर दायित्व का निर्वाह साहित्यकार के अतिरिक्त कोई अन्य नहीं कर सकता। साहित्य की समाज को इसीलिए महती आवश्यकता है। साहित्य सच्चे अर्थों में हमें मनुष्य बनाता है और तदुपरि ब्रह्मत्व की ओर उन्मुख करता है। साहित्य अर्थोपार्जन का साधन नहीं। साहित्य साधक का अन्तःकरण तो समुद्रवत् विशाल होता है तभी तो जीवन जगत् को संपूर्ण गंदगी को पचाकर वह बहुमूल्य मोती-मूंगों से तट को सजाता है।

अस्तु निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि आज जिस प्रकार हमारी संस्कृति और लोक जीवन पर पूंजी आश्रित समूह माध्यम, उपभोक्ता-संस्कृति और दूरदर्शन का सीधा आक्रमण हो रहा है। इसलिए प्रदूषित राजनैतिक संस्कृति से अलग हमारे नैतिक मूल्यों का दिन प्रतिदिन हनन हो रहा है। दलबंदी और सत्ता की लोलुपता ने जनमानस को आत्म विस्मृत कर दिया है। इस दुर्भाग्यपूर्ण परिवेश से देश का साहित्यकार भी प्रभावित हो रहा है। फलतः हिन्दी साहित्य निरंतर संस्कारविहीन और दिशाहीन होता जा रहा है। मानुषी भाव और संवेदना की दरिद्रता के कारण वह निर्जीव होता जा रहा है। इसी से सहृदय सामाजिक और पाठक के परिवेश तथा रचना के परिवेश में कोई तालमेल नहीं है। साहित्य की संरचना में पश्चिम का संसार बसने लगा है। यह इस देश की वास्तविकता नहीं है। अतः ऐसे प्रतिकूल परिवेश में साहित्यकार का सर्वप्रथम दायित्व है कि वह उदार बनकर प्रकृति में तादात्म्य स्थापित करें और साहित्य सृजन में सच्चाई और ईमानदारी का अनुवर्ती बनें साथ ही जो अमानवीय तत्त्व हमारी संस्कृति पर प्रहार कर रहे हैं उनके विरोध में भारतीयता के सहारे अपनी आवाज बुलंद करें। जीवन की समग्रता के लिए सम-सामाजिक होना ही प्रभूत नहीं है। इसे प्रभूत बनाने के लिये नैतिक दायित्व का बोध भी बना रहना चाहिए। सच्चे साहित्यकार का उद्बोधन तो सदैव कान्ता सम्मत होने से मधुर और कल्याणकारी ही होता है। उसकी भूमिका सदैव जीवन और अमृत से जुड़ी रहती है यह साहित्य की ही विशेषता है कि वह हमें मन के आनन्दमय कोष से जोड़कर निहाल कर देती है और हमारा जीवन एक उत्सव हो जाता है। हम कुंठित न रहकर उदान्त हो जाते हैं, भयभीत न होकर निर्भय हो जाते हैं और अपूर्ण न रहकर पूर्ण हो जाते हैं। अस्तु, भारतीय दृष्टि की इस व्यापकता और उदात्तता को यहां के साहित्यकार को कभी भुलाना नहीं चाहिए। विशेषतः आज के प्रदूषित परिवेश में इसको हृदयंगम करने की आवश्यकता है। अपने को विस्मृतकर पराये को अपनाना कभी हितकर नहीं होता। अतः हम पश्चिम से ग्रहण करें। लेकिन उतना ही जो हमारे अनुकूल हो, जिसे हम पचा सकें। **"सार-सार को गहि रहै थोथा देय उड़ाय"** तभी साहित्य का भला हो सकता है और वह समाज को उचित दिशा दे सकता है।

**४९ बी, आलोक नगर, आगरा-२८२०१०**

# महिला दिवस एक औपचारिकता

❑ प्रतिभा

**महिला-दिवस** मनाना भी शायद राष्ट्रीय मजबूरी इसीलिए बन गया है क्योंकि यह एक अन्तर्राष्ट्रीय दिवस है। इस दिन भी बाल दिवस, शहीद दिवस, हिन्दी दिवस की ही तरह मात्र कर्मकाण्ड होते हैं। उस दिन नारी की हालत को लेकर उन पर अत्याचारों के प्रति सजग होकर नेता-अभिनेता व अनेक अन्य महिला संस्थाएं मगरमच्छी आंसू बहाते दिखाई देते हैं।

क्या हुआ 'महिला दिवस' पर महिलाओं के लिए? कोई नया, सार्थक, सशक्त कानून अभी तक बना है, या अन्य कोई सहूलियत महिलाओं को दी गई उस दिन? सिवाय जगह-जगह दस दिन पहले से लेकर उस दिन तक सिवाय साफ-सुथरी पोशाकों की फैशन परेड। शानदार कारों का तांता, नेताओं के भाषण इस बार भी हुए। जहां-जहां महिला दिवस के नाम पर कार्यक्रम हुए पर उन सभी का अन्त ऐसा होना चाहिये, वैसा होना चाहिए पर ही हुआ। कहीं कोई ठोस तथ्य सामने नहीं आया। भारतीय समाज में जो मर्यादा सहस्रों वर्षों से स्थापित है, उसमें नारी मां, बहन, बेटी, पत्नी इन विचित्र रूपों में घर, समाज, देश का सम्मान बढ़ाती है। वह वंदनीय रही है किन्तु मर्यादाहीनता की प्रवृत्ति ने समाज में उसकी स्थिति दयनीय बना दी है। अनेक महिलाएं तो आज इसके पारिवारिक, आर्थिक, सामाजिक कठिनाइयों के कारण 'अग्नि समाधि' पाती हैं, क्या इस सिलसिले को रोकने के लिए उस दिशा में कोई ठोस कदम हमने उठाया। दहेज आज भी लाखों अबलाओं को लील रहा है क्या कोई ठोस कार्यक्रम सामने आया महिला दिवस पर।

आज समर्थ से समर्थ परिवारों में भी बेटी का जन्म खुशी नहीं देता। वहां खुशी हो तो ऊपरी हो सकती है आन्तरिक नहीं होती, पहली लड़की का परिवार में जन्म लेना तो अनेक अशुभ मानते हैं। यदि वह दूसरे या तीसरे स्थान पर जन्म ले तो शायद परिवार में वह स्नेह की कुछ भागीदारी पा जाती है।

लोकतन्त्र में महिलाओं की सशक्त भागीदारी की बात तो सुनी जाती है परन्तु वह बेश्याएं जिनके बच्चों के समक्ष कोई दिशा और दशा नहीं है क्या महिला दिवस पर उनके उद्धार के लिए कोई कदम उठा पाए हैं हम। वे महिलाएं जो दुर्दिनों की पीड़ा झेलती हैं, मजबूरी में घरों से निकाली जा रही हैं और जो सम्पन्न परिवारों की होकर भी वृन्दावन, हरिद्वार, मथुरा स्थित महिला संस्थाओं में मौत से भी बदतर जिन्दगी बिता रही हैं, भीख मांगने पर मजबूर हैं, क्या ऐसी महिलाओं में कोई आत्मविश्वास जगा पाए हैं हम? और हमारे महिला दिवस जैसे कार्यक्रम?

हम तनिक सोच कर देखें तो इन पचास वर्षों में भी एक विशेष वर्ग को छोड़कर नीचे से ऊपर तक महिलाओं की स्थिति यथापूर्व ही है। वह वैसी ही घुटन, शोषण, अत्याचार, अपमानित स्थिति का सामना करती दिखाई देती है। सबसे बड़ी आवश्यकता है हम महिलाओं में आत्मविश्वास व सम्मान की सुरक्षा के आश्वस्त होने का भाव जगाएं। कुछ भी हो नारी 'मां' है जन्मदायिनी है। सच्चाई तो यह है कि आज कितने ही दिवस क्यों न मना लिए जाएं नारी को बराबरी पर लाने के नारे गुंजाएं किन्तु हमारे प्रयास उसकी गरिमा को सही अर्थों में प्रतिष्ठित न कर पाएंगे।

## वेद प्रचार हेतु प्राप्त सहयोग

**सर्वश्री :—** रमेशचन्द्र चोपड़ा-दिल्ली ३१०० रु०। के० के० शुक्ला-दिल्ली २१०० रु०। गजानन्द आर्य, कलकत्ता-२१००/रु०। निर्मल सेठ दिल्ली १६५० रु०। आर० के० भाटिया-दिल्ली १५०० रु०। आर्य समाज नयावांस दिल्ली ११०० रु०। ब्रह्मानन्द नयावांस ११०० रु०। अनिल यादव आर्य भागलपुर ६०० रु०। सरला जौहरी दिल्ली ५०० रु०। शकुन्तला सागर दिल्ली ५०० रु०। वीरेन्द्र रस्तोगी बम्बई १००१ रु०। भरत कौड़िया मोरीशस १००० रु०। स्वामी उत्तम प्रकाश दिल्ली ५०० रु०। महिला आर्य समाज लाजपत नगर ४०० रु०। विशम्भर दयाल शर्मा जनकपुरी २०१ रु०। विमला वर्मा दिल्ली २०० रु०। चमन लाल ग्रोवर दिल्ली ५०० रु०। आर्य समाज अमर कालोनी २५१ रु०। विजय गुप्ता दिल्ली २५१ रु०। मनोज सूद दिल्ली २०० रु०। ज्ञानचन्द्र चन्द्रभान दिल्ली १५० रु०। आर० पी० सिंह गाजियाबाद १५० रु०। वासुदेव लाल धवन दिल्ली २०० रु०। श्यामा धवन २०० रु०। जी० गोलेला हालैंड ९२२ रु०। रविन्द्र सिंह जींदपुर ३० रु०। पुष्पा गुप्ता दिल्ली २१ रु०। जे० पी० अग्रवाल-लखनऊ।

**Groversons**

ग्रोवर सन्स

के उत्कृष्ट उत्पादन
क्वालिटी एंव डिजाईनों
में सर्वोत्तम

Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा

श्वेता ब्रा
Shvaita BRA

सरिता ब्रा
Sarita BRA

Shalini BRA
शालिनी ब्रा

सुनैना ब्रा
Sunaina BRA

Groversons
Paris Beauty
पेरिस ब्यूटी
ग्रोवर सन्स
BRA

ब्रा • पैन्टी • अन्डरवियर • बनियान ब्लूमर
• बेबी पैन्टीज • शमीज

भारत के सभी प्रान्तों की पसन्द का केन्द्र

सेल डिपो: **चमन लाल एन्टरप्राइज़िज़**
गली नः 2, अजमल खाँ रोड, करोल बाग, नई दिल्ली-110005
दूरभाष : 5744886-5729224

# समाचार दर्शन

### स्व० सचदेवा स्मृति दिवस

नई दिल्ली। आर्य समाज मन्दिर चूना मंडी के भूतपूर्व मंत्री स्वर्गीय श्री शामदास सचदेवा जी की पुण्यतिथि २२ मार्च को आर्य समाज मन्दिर, चूना मंडी, पहाड़गंज में "स्मृति दिवस" के रूप में मनाई गयी। प्रातः ९ बजे से १०.१५ बजे तक शान्ति यज्ञ सम्पन्न हुआ। उसके बाद भजन तथा प्रवचन के कार्यक्रम सम्पन्न हुए।

### वैदिक धर्म चर्चा सम्मेलन

नई दिल्ली। आर्य समाज (डी० ए० वी०) विकासपुरी की प्रधान श्रीमती चित्रा नाकरा, प्राचार्या की प्रेरणा से वैदिक धर्म चर्चा सम्मेलन एवं अध्यापक अध्ययन संगोष्ठी का आयोजन २४ मार्च से २७ मार्च तक सम्पन्न हुआ जिसमें कई विद्वानों ने आध्यात्मिक विषयों पर विचार प्रस्तुत किए।

### डॉ० आर्य तीसरी बार पुरस्कृत

कोटा। नगर और हाड़ौती क्षेत्र के आर्यसमाज के कार्यकर्ता और श्रीराम फर्टीलाइजर्स एण्ड केमिकल्स, कोटा के कारबाइड प्लान्ट में कार्यरत क्रेन आपरेटर और मजदूर नेता डॉ० रामकृष्ण आर्य ने श्रीमद् दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश न्यास, नवलखा महल, गुलाबबाग, उदयपुर द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर आयोजित सत्यार्थ प्रकाश निबन्ध प्रतियोगिता में लगातार तीसरी बार २१०० रु० का प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। डॉ० आर्य ने उक्त न्यास द्वारा आयोजित १९९६ की निबन्ध प्रतियोगिता में "सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास के आलोक में ईश्वर का स्वरूप", द्वितीय में "मानव निर्माण प्रथम सोपान" और तृतीय समुल्लास के आलोक में "दयानन्दीय शिक्षा नीति के निर्देशक तत्त्व" पर निबन्ध लिखकर अभी हाल ही में २८ फरवरी को सत्यार्थ प्रकाश मेला, उदयपुर में विधायक श्री शिवकुमार सनाढ्य से पुरस्कार प्राप्त किया है।

### आर्य समाज नकुड़ (सहारनपुर)

**सहारनपुर** : आर्य समाज नकुड़ (सहारनपुर) की साधारण सभा में निम्न पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्वाचित घोषित किए गये। प्रधान-धर्मपाल गुप्ता, उपप्रधान-देवदत्त आर्य, मन्त्री-भूपेन्द्र कुमार गोयल, उपमन्त्री-मोहन लाल आर्य, कोषाध्यक्ष-पंकज कुमार, पुस्तकाध्यक्ष-सुरेश कुमार, लेखा निरीक्षक-सफटर सिंह जी। सदस्य प्रबन्ध समिति-राजकुमार जी, तेलूराम जी, रमेशचन्द जी, बिरजन सिंह जी, विजेन्द्र कुमार जी, जयप्रकाश आर्य।

### आर्य समाज कार्यकर्ता का निधन

आर्य समाज बड़हलगंज के सक्रिय सदस्य श्री कन्हैया लाल आर्य का ५३ वर्ष की आयु में दिनांक ५.३.९८ बृहस्पतिवार को प्रातः स्वर्गवास हो गया। वे अपने पीछे पत्नी एवं २ पुत्र, १ पुत्री छोड़ गये। आर्य समाजी परिवारों में वे एक अच्छे व कुशल सक्रिय कार्यकर्ता के रूप में पहचान बनाये हुये थे जिनके न रहने से अपूर्णीय क्षति हुई है।

### महर्षि का जन्म दिवस व बोधरात्रि

महर्षि दयानन्द सरस्वती की जन्मतिथि दशवीं हर्षोल्लास के साथ मनायी तथा स्वामी जी के विस्तृत चिन्तन तथा उपलब्धियों का स्मरण करते हुए प्रत्येक आर्य में नौष्ठिक उत्साह प्रकट हुआ। चतुर्दशी को ऋषि उद्यान में आयोजित बोधोत्सव पर ऋषि सम्बन्धी भजन व भाषण हुए।

### परोपकारिणी सभा अजमेर

अजमेर। ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा अजमेर ने अपने उद्देश्यों के अनुरूप एक कार्यक्रम का आयोजन १८ से २४ फरवरी तक ऋषि उद्यान में किया। इस शिविर में साधकों की संख्या ४० थी। साधकों ने वैदिक वाङ्मय के विभिन्न आयामों का ज्ञानार्जन किया। शिविर में ब्र० सत्यप्रकाश द्वारा योगदर्शन व कठोपनिषद् पढ़ाया गया। पं० धर्मवीर जी ने सत्यार्थप्रकाश, संस्कार विधि तथा नित्यकर्मविधि के कुछ विशेष आयामों को विस्तृत भाव से समझाया। अन्तिम दिन साधकों की परीक्षा का परिणाम उत्तम रहा। शिविर का समापन समारोह श्री रमेश चन्द चोपड़ा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। श्रीमती निर्मल चोपड़ा, श्रीमती प्रभा खुराना तथा निर्मल सेठ ने ईश्वर भक्ति तथा ऋषि भक्ति के सुमधुर भजन प्रस्तुत किए।

### लक्ष्मण दास भाटिया का निधन

दिल्ली : आर्यसमाज झिलमिल कालोनी के प्रधान श्री लक्ष्मण दास भाटिया का निधन हृदय गति रुक जाने से दिनांक १५ मार्च प्रातः ८ बजे हो गया। वे ७५ वर्ष के थे तथा कर्त्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ता थे। परमात्मा इनके परिवार को धैर्य दें तथा दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करें। भाटिया जी की शोकसभा २७ मार्च आर्य समाज झिलमिल कालोनी में सम्पन्न हुई।

# जिसके घर में वेद नहीं वह हिन्दू का घर नहीं

(परमात्मा की अमर वाणी

## चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

लागत मूल्य 1600/– रु०
अभी लेने पर 1200/– रु०

(मन्त्र–शब्दार्थ–छन्द–स्वर–देवता आदि सहित)
23×36 से०मी० साइज में, पृष्ठ 2200
बढ़िया सुनहरी जिल्दें। वजन लगभग 8 किलो

श्रेष्ठ बढ़िया पेपर पर 3000/– रु० अब 2250/– रु० में प्राप्त करें

आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा ½ धन अवश्य भेजें।

पं० राकेशरानी–अध्यक्ष **दयानन्द संस्थान**

**वेद मन्दिर** महात्मा वेदभिक्षु: सेवाश्रम, इब्राहीमपुर, दिल्ली–110036

*सम्पर्क कार्यालय* : 2286, आर्य समाज मार्ग, करोल बाग,
नई दिल्ली–110005, दूरभाष–5724741

जन-ज्ञान (मासिक) वेद मन्दिर –महात्मा वेदभिक्षुः सेवाश्रम लेखरामनगर (इन्द्राहीमपुर) पो. आ. मुखमेलपुर, दिल्ली-११००३६

चैत्र २०५५
अप्रैल १९९८

Posted at N. D. PSD on
Date 5 & 6-Delhi Postal
Registration No DL-11185/98
R. N. 10719.65

## प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

| | | |
|---|---|---|
| 1. | चारों वेदों का हिन्दी भाष्य | मूल्य 1600 रु. |
| 2. | सामदेव : आध्यात्मिक भाष्य (पं. विश्वनाथ विद्यामार्त्तण्ड) | 201 रु. |
| 3. | वेद ज्योति चारों वेदों के चुने हुये (100-100 मन्त्रों की व्याख्या) | 35 रु. |
| 4. | वेदांजलि (वर्ष के 365 दिनों के लिए 365 वेद मंत्रों की व्याख्या) | 65 रु. |
| 5. | सोमसरोवर : (सामवेद के पावमान पर्व की व्याख्या | 60 रु. |
| 6. | भारत के वीर बच्चों की कहानियां | 6 रु. |
| 7. | धरती का स्वर्ग | 6 रु. |
| 8. | सरस्वतीन्द्र जीवन (महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र) | 50 रु. |
| 9. | महर्षि दयानन्द सरस्वती (जीवन परिचय) | 10 रु. |
| 10. | धर्म का सार (धर्म का रहस्य बताने वाली कथाएं) | 6 रु. |
| 11. | स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती (जीवन परिचय) | 4 रु. |
| 12. | वैदिक सम्पत्ति | 151 रु. |
| 13. | धर्म का मार्ग (धर्म के दस लक्षणों की सरल व्याख्या) | 6 रु. |
| 14. | योगासन | 4 रु. |
| 15. | योग और ब्रह्मचर्य | 6 रु. |
| 16. | Life and Teachings of Swami Dayanand | 200 रु. |
| 17. | Concept of God | 50 रु. |
| 18. | श्रीमद्दयानन्द प्रकाश | 60 रु. |
| 19. | Light of Truth | 100 रु. |
| 20. | प्रकृति और सर्ग (आचार्य उदयवीर शास्त्री) | 10 रु. |
| 21. | वैदिक गीता का सरल हिन्दी भाष्य | 50 रु. |
| 22. | संक्षिप्त महाभारत | 50 रु. |
| 23. | संक्षिप्त रामायण | 15 रु. |
| 24. | ऋग्वेद शतकम | 6 रु. |
| 25. | वैदिक सान्ध्य गीत | 6 रु. |
| 26. | गायत्री मन्त्र का चार्ट, हिन्दी व्याख्या सहित दोनों ओर पक्की लगा, कम से कम दस प्रति मंगायें | 3 रु. |

**100 रु० से अधिक साहित्य पर 15 प्रतिशत 300 रु० से अधिक लेने पर 20 प्रतिशत तथा 500 रु० से अधिक लेने पर 25 प्रतिशत होगा। आदेश के साथ चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।**

## हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य बांटिये

| | | |
|---|---|---|
| 1. | क्या आप सारा भारत दारूल इस्लाम बनने देंगे? | 1.00 रु |
| 2. | हिन्दुओं को चेतावनी-वेदभिक्षुः | 1.00 रु. |
| 3. | भारत के मुसलमानों का क्या कर्त्तव्य - वेदभिक्षुः | 1.00 रु. |
| 4. | हम सब हिन्दू हैं- वीर सावरकर | 1.00 रु. |
| 5. | इस्लाम में क्या है? "राकेश रानी" | 1.00 रु. |
| 6. | इस्लामिस्तान बनाने की तैयारियाँ - जहीर नियाजी | 1.00 रु. |
| 7. | हिन्दू जागो! देश बचाओ | 1.00 रु. |
| 8. | इस्लाम - एक परिचय | 1.00 रु. |
| 9. | पोप की सेना का भारत पर हमला - वेदभिक्षुः | 1.00 रु. |
| 10. | पादरियों को चुनौती | 1.00 रु. |
| 11. | बाईबल की चुनौती | 1.00 रु. |
| 12. | क्या ईसा खुदा का बेटा था? | 1.00 रु. |
| 13. | और पादरी भाग गया | 1.00 रु. |
| 14. | हमने इस्लाम क्यों छोड़ा? | 1.00 रु. |
| 15. | क्या भारत का एक और विभाजन होगा? | 1.00 रु. |
| 16. | हिन्दू राष्ट्र के नाम मां का संदेश | 1.00 रु. |
| 17. | हिन्दू जागेगा, देश का संकट भागेगा। | 1.00 रु. |
| 18. | A challange to the Christian Faith | 50 पैसे |
| 19. | वीर सावरकर - संक्षिप्त जीवन परिचय | 4.00 रु. |
| 20. | मोपला (उपन्यास) - वीर सावरकर | 6.00 रु. |
| 21. | जनज्ञान का 'सावरकर विशेषांक' | 6.00 रु. |

एक रुपये वाली "हिन्दू धर्म रक्षक" साहित्य की 1000 पुस्तकें मंगाने पर 50 प्रतिशत और 500 पुस्तकें मंगाने पर 25 प्रतिशत कमीशन देय है। आदेश के साथ सम्पूर्ण अथवा कम से कम चौथाई धन अग्रिम अवश्य भेजें।

व्यवस्थापक – दयानन्द संस्थान
2286-आर्य समाज मार्ग, नई दिल्ली-5